भूदान-यज्ञ

भूदान-यज्ञ मूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रान्ति का सन्देशवाहक – साप्ताहिक

सर्व सेवा संघ का मुख पत्र

वर्ष : १५ अंक : २८

सोमवार १४ अप्रैल, '६९

अन्य पृष्ठों पर

संगठन के सम्बन्ध में सहचिंतन के लिए...
—रामचन्द्र राही ३३८

डिक्टेटर-से-डिक्टेटर
—सम्पादकीय ३३९

समाज बदले, और शीघ्र बदले
—दादा धर्माधिकारी ३४१

सामाजिक टकराव और गांधीजी
—ए० के० बासगुप्ता ३४३

मध्यप्रदेश-दान की योजना ३४५

विनोबा-निवास से ३४६

पंजाब-हरियाणा सर्वोदय-मण्डल
—यशपाल मित्तल ३४७

बम्बई में शिवसेना का प्रभाव
—सुरेशराम भाई ३४९

अन्य स्तम्भ

सामयिक चर्चा : आन्दोलन के समाचार

'गाँव की बात' : विशेषांक

भू-जयन्ती (१८ अप्रैल) के निमित्त से 'गाँव की बात' का अगला अंक २१ अप्रैल '६९ के अंक के साथ १६ पृष्ठों का, विशेषांक के रूप में प्रकाशित होगा। —व्यवस्थापक

सम्पादक
राजमूर्ति

सर्व सेवा संघ प्रकाशन
राजघाट, वाराणसी–१, उत्तर प्रदेश
फोन : ७२८५

अस्पृश्यता का अभिशाप

आजकल हिन्दू धर्म में जो अस्पृश्यता देखने में आती है, वह उसका एक अमिट कलंक है। मैं यह मानने से इनकार करता हूँ कि वह हमारे समाज में स्मरणातीत काल से चली आयी है। मेरा खयाल है कि अस्पृश्यता की यह घृणित भावना हम लोगों में तब आयी होगी जब हम अपने पतन की चरम सीमा पर रहे होंगे। और तब से यह बुराई हमारे साथ लग गयी और आज भी लगी हुई है। मैं मानता हूँ कि यह एक भयंकर अभिशाप है। और यह अभिशाप जबतक हमारे साथ रहेगा तबतक मुझे लगता है कि इस पावन भूमि में हमें जब जो भी तकलीफ सहना पड़े, वह हमारे इस अपराध का, जिसे हम आज भी कर रहे हैं, उचित दण्ड होगी।[1]

मेरी राय में हिन्दू धर्म में दिखाई पड़नेवाला अस्पृश्यता का वर्तमान रूप ईश्वर और मनुष्य के खिलाफ किया गया भयंकर अपराध है और इसलिए वह एक ऐसा विष है जो धीरे-धीरे हिन्दू धर्म के प्राण को ही निःशेष किये जा रहा है। मेरी राय में शास्त्रों में, यदि हम सब शास्त्रों को मिलाकर पढ़ें तो, इस बुराई का कहीं कोई समर्थन नहीं है। शास्त्रों में एक तरह की हितकारी अस्पृश्यता का विधान जरूर है, लेकिन उस तरह की अस्पृश्यता सब धर्मों में पायी जाती है। वह अस्पृश्यता तो स्वच्छता के नियम का ही एक अंग है। वह तो सदा रहेगी। लेकिन भारत में हम आज जैसी अस्पृश्यता देख रहे हैं वह एक भयंकर चीज है और उसके हरएक प्रान्त में, यहाँ तक कि हरएक जिले में, अलग-अलग कितने ही रूप हैं। उसने अस्पृश्यों और स्पृश्यों, दोनों को नीचे गिराया है। उसने लगभग चार करोड़ मनुष्यों का विकास रोक रखा है। उन्हें जीवन की सामान्य सुविधाएँ भी नहीं दी जातीं। इसलिए इस बुराई को जितनी जल्दी निर्मूल कर दिया जाय, उतना ही हिन्दू धर्म, भारत और शायद समग्र मानव-जाति के लिए वह कल्याणकारी सिद्ध होगी।[2]

इस बात से कभी किसीने इनकार नहीं किया कि अस्पृश्यता एक पुरानी प्रथा है। लेकिन यदि वह एक अनिष्ट वस्तु है, तो उसकी प्राचीनता के आधार पर उसका बचाव नहीं किया जा सकता। यदि अस्पृश्य लोग आर्यों के समाज के बाहर हैं, तो इसमें उस समाज की ही हानि है। और यदि यह कहा जाय कि आर्यों ने अपनी प्रगति-यात्रा में किसी मंजिल पर किसी वर्ग-विशेष को दण्ड के तौर पर समाज से बहिष्कृत कर दिया था, तो उनके पूर्वजों को किसी भी कारण से दण्डित किया गया हो, परन्तु वह दण्ड उस वर्ग की सन्तान को देते रहने का कोई कारण नहीं हो सकता।[3]

मो. क. गांधी

(१) "स्पीचेज ऐण्ड राइटिंग्ज आफ महात्मा गांधी", पृष्ठ : ३८७ (२) "हरिजन", ११-२-३३ (३) "यंग इंडिया", २६-७-२६।

www.vinoba.in

संगठन के सम्बन्ध में सहचिंतन के लिए...

१८ अप्रैल सन् १९५१ को तेलगांना के पोचमपल्ली गांव में भूमिहीनों के लिए ८० एकड़ भूमि का दान मांगनेवाले के अव्यक्त अन्तर में क्या रहा होगा, नहीं मालूम, लेकिन जाहिर रूप में इतनी बात स्पष्ट है कि उसकी कोई पूर्वयोजना नहीं थी और न उसकी सम्भावनाओं के सम्बन्ध में बहुत दूर तक का चिंतन था। देनेवाले के मन में तो सम्भावनाओं के सम्बन्ध में और भी कम पूर्व चिंतन की गुंजाइश थी, लेकिन परिस्थिति के गर्भ से यह 'भूदान' प्रकट हुआ और शायद इतिहास, नियति या परमेश्वर की प्रेरणा से उसका स्वरूप व्यापकतर होता गया। आकार भी बढ़ा, आत्मा भी विकसित हुई और आज भूदान छठा हिस्सा, बीघा-कट्ठा, ग्रामदान, प्रखण्डदान, जिलादान की मंजिलों से होते हुए राज्यदान तक पहुँच रहा है।

हर मंजिल पर आगे बढ़ने के लिए इस क्रान्ति-अभियान के नायक ने एक लक्ष्य की घोषणा की—करायी कहना शायद अधिक उपयुक्त होगा—और लक्ष्य-पूर्ति की चेष्टा करते हुए हम आगे बढ़ते रहे। कहनेवाले कहते हैं कि इस आन्दोलन का इतिहास विफलताओं का ही इतिहास है। भूदान का जो लक्ष्य घोषित था, पूरा नहीं हुआ, सन् १९५७ तक 'पूर्ण विकास या पूर्ण विनाश' का उद्घोष उद्घोष बनकर ही रह गया। आंकड़े बढ़ते गये, लेकिन ग्राम-स्वराज्य का चित्र किसी एक गाँव में भी कहीं देखने को नहीं मिला, दरभंगा जिलादान के बाद कुछ नहीं हुआ, आन्दोलन का आकार फैल रहा है, लेकिन उस अनुपात में 'आत्मा' पुष्ट नहीं हो रही है, गुणात्मक विकास आन्दोलन का नहीं हो रहा है, परिमाणात्मक हो रहा है। जिस कोण से आन्दोलन को देखकर ये बातें कही जाती हैं, उस दृष्टि से ठीक हो सकती हैं।

लेकिन इसे देखने का एक दूसरा भी कोण है दृष्टि का, और वह है क्रान्ति का दृष्टिकोण! पश्चिम का एक क्रान्तिकारी लेखक डेब्रे अपनी पुस्तक "क्रान्ति में क्रान्ति" में लिखता है : "एक क्रान्तिकारी के लिए विफलता अगली छलांग के लिए एक 'स्प्रिंग बोर्ड' है। क्रान्तिकारी दर्शन की दृष्टि से यह 'विजय' से अधिक सम्भावनाओं से भरा है। इससे अनुभव और ज्ञात अर्जित होता है।" क्या क्रान्ति के इस दृष्टिकोण से ग्रामस्वराज्य का आन्दोलन विफलता का इतिहास कहा जायगा? क्या हमें हर संकल्प से एक नये और अधिक व्यापकतर संकल्प की प्रेरणा और शक्ति नहीं मिलती रही है? कहनेवाले इसे विफलता कहें, लेकिन करनेवाले के लिए तो इसे क्रान्ति के आरोहरण में एक के बाद एक दिखाई देनेवाली मंजिलें हैं, जिनसे प्रेरणा और शक्ति पाकर वे आगे बढ़ते जा रहे हैं···बढ़ते जा रहे हैं।

गुरिल्ला-युद्ध और क्रान्ति का एक 'हीरो' चेग्वारा अपनी एक पुस्तक में कहता है : "तात्कालिक संघर्षों की निष्पत्ति बहुत महत्व नहीं रखती। आखिरी परिणाम का जहाँ तक सम्बन्ध है, महत्त्व इस बात का नहीं है कि एक या दूसरा आन्दोलन पराजित हुआ, महत्त्व का मुद्दा तो क्रान्ति के लिए यह है कि आन्दोलन दिन-प्रति-दिन परिपक्व हो रहा है या नहीं, क्रान्ति की चेतना और उसकी सम्भावनाओं के प्रति निष्ठा बढ़ रही है या नहीं।" यद्यपि हमारी क्रान्ति की पद्धति और प्रक्रिया चेग्वारा की पद्धति और प्रक्रिया से भिन्न है, लेकिन उसमें निहित जो चेतना है, वह महत्त्वपूर्ण है, हमारे लिए भी।

क्रान्ति की इस दृष्टि से निश्चय ही हमें विफलता या निराशा की कोई बात अपने आन्दोलन में दिखाई नहीं देती। लेकिन इतना जरूर हैं कि 'राज्यदान' के करीब आने से अब हम एक ऐसे मुकाम पर पहुँच रहे हैं, जहाँ बहुत ही सतर्कता के साथ आगे कदम बढ़ाने की जरूरत है।

क्रान्ति के प्रयासों और परिणामों का अध्ययन करके विद्वान लोगों ने क्रान्ति की ३ स्थितियाँ स्पष्ट की है : (१) स्थापना, (२) विकास, और (३) सफलता के लिए आखिरी पूर्ण संयोजित और संगठित चेष्टा। आज हम यह कहने की स्थिति में पहुँच गये हैं कि ग्रामस्वराज्य की क्रान्ति विचार को देश में स्थापित कर चुकी है। अब यह विचार उपेक्षणीय नहीं है। इससे आगे की स्थिति विकास की ओर हम बढ़ रहे हैं। ग्रामदानी ग्रामसभाओं का संगठन, ग्रामदान की शर्तों की पूर्ति, निर्वाचन मण्डलों का संगठन आदि क्रान्ति-विकास के काम पूरे करके हमें 'सत्ता' को 'लोक' तक पहुँचाने का लक्ष्य पूरा करना है। निश्चय ही यह बात लिख देने या कह देने में जितनी आसान है, करने में उतनी ही कठिन। लेकिन इससे हम रुकने या हार माननेवाले तो हैं नहीं! जैसा कि विनोबाजी कहते हैं कि भगवान छोटे लोगों द्वारा ही बड़े काम कराना चाहता है। इस भारी काम को हमें अपनी अल्प शक्ति से करने की प्रेरणा देनेवाला बाबा का महान व्यक्तित्व उपलब्ध है, यहह मारा सौभाग्य है, हमसे अधिक इस युग का सौभाग्य है। लेकिन इस उपलब्धि के साथ ही हमें एक दूसरे पहलू पर भी विचार करना बहुत ही आवश्यक लगता है, और वह है हमारे संगठन की शक्ति का। 'संगठन अहिंसा की कसौटी है,' इसी मंत्र-वाक्य को ही ध्यान में रखकर सर्वोदय-मण्डलों और सर्व सेवा संघ का संगठन खड़ा करने का प्रयास हुआ है।

लेकिन मेरी नम्र राय में आज ये संगठन आन्दोलन की आवश्यकताएँ अभी पूरी नहीं कर पा रहे हैं। जब कि राज्यदान के कारण इस आन्दोलन से देश में अपेक्षाएँ तेजी से बढ़ रही हैं। हम पूरे देश को समाज के हर व्यक्ति को इसमें लाना चाहते हैं, तो ऐसी अपेक्षा अस्वाभाविक भी नहीं है। इस स्थिति में आन्दोलन जीवन-मरण की नाजुक स्थिति में पहुँच गया है, ऐसा कहा जा सकता है।

प्राथमिक सर्वोदय-मण्डल कैसे अधिकाधिक संगठित और सक्रिय हों, उनकी बुनियाद पर बीच की, और उसके बाद देश की इकाई सर्व सेवा संघ, किस प्रकार सबल नेतृत्व देने की क्षमता विकसित कर सके, ये अत्यन्त गम्भीरता और सतर्कता से विचार करने के पहलू हैं। अधिकार और संघर्ष से मुक्त विचार की शक्ति ही हमारी मुख्य शक्ति है, इसलिए अपने क्रान्ति-विचार को केन्द्र मानकर हम तिरुपति-अधिवेशन में इस पहलू पर विचार करें, ताकि संगठन विचार का पूरी तरह प्रतिनिधित्व कर सके। —रामचन्द्र राही

www.vinoba.in

सम्पादकीय

डिक्टेटर-से-डिक्टेटर

पाकिस्तान एक डिक्टेटर से छूटा और दूसरे डिक्टेटर के हाथ में गया। दस साल में इतिहास का चक्र घूम गया। जो पहले अयूब ने किया था वही अब याह्या खाँ ने किया है। जब अन्तिम फैसला तलवार को ही करना है तो फैसला उसीके पक्ष में होगा जिसकी तलवार मजबूत होगी। अयूब ने जिस तरह इसकंदर मिर्जा को खत्म किया था, उसी तरह याह्या ने अयूब को खत्म किया। जनता ने उस तमाशे को भी देखा था, और अब इस तमाशे को भी देख रही है। देखने और भोगने के सिवाय वह फिलहाल कर ही क्या सकती है?

पाकिस्तान का जन्म उन्माद में हुआ था। उन्माद के कारण उसकी स्वतंत्रता जन्म से ही विषाक्त हुई। जिस तरह धर्मान्धता और घृणा ने स्वतंत्रता को विषाक्त किया, उसी तरह पिछले महीनों के उपद्रवों ने नागरिक-अधिकारों के अभियान को कमजोर बनाया, और अन्त में उभरती हुई नयी लोकतांत्रिक चेतना को पूँजीवाद और सैनिकवाद के सम्मिलित प्रहार का शिकार बन जाना पड़ा। मालूम नहीं कहाँ तक पाकिस्तान के जन्मदाता जिना ने नियति के इस क्रम की कल्पना की होगी।

पाकिस्तान का इतिहास इस बात का प्रमाण है कि कोई देश एक बार हिंसा के रास्ते को अपनाकर आधी मंजिल पर नहीं रुक सकता। हिंसा और तानाशाही की यात्रा अयूब की 'बेसिक डिमाक्रेसी' पर नहीं रुक सकती थी; उसे याह्या के 'मार्शल ला' तक पहुँचना ही था। जहाँ पहुँचना अनिवार्य था, वहाँ पाकिस्तान पहुँच गया।

हिंसा और तानाशाही की इस यात्रा में पाकिस्तान ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि अगर नागरिक भी तानाशाह की तरह हिंसा को ही अपनी शक्ति बनाने की कोशिश करेगा तो अन्तिम विजय हिंसा की ही होगी, नागरिक की नहीं। और अन्त में जो हिंसा अधिक शक्तिशाली होगी वही विजयी होगी। निश्चित ही आज के युग में राज्य की हिंसा नागरिक की हिंसा से कहीं अधिक शक्तिशाली है। उपद्रव से संगठित, सुसज्जित हिंसा का मुकाबिला नहीं किया जा सकता। अधकचरी हिंसा को लेकर पाकिस्तान की जनता ने अपने बचे-खुचे अधिकार भी खो दिये, और अगर बन्दूक से उसकी विजय भी होती तो शासन बन्दूकवालों का होता, जनता का नहीं। हिंसा की 'क्रान्ति' की उत्तराधिकारी प्रतिक्रान्ति ही होती है।

आखिर, पाकिस्तान की जनता क्या चाहती थी? उसकी माँग थी नागरिक-अधिकारों की। पश्चिमी पाकिस्तान का आन्दोलन मुख्यतः शहरी था। विद्यार्थी, मजदूर, पढ़े-लिखे मध्यमवर्गीय लोग, सब अयूबशाही की घुटन से व्याकुल थे। वे कुछ कहना चाहते थे, पर कह नहीं सकते थे; करना चाहते थे, लेकिन कर नहीं सकते थे। वे अपनी आँखों से देख रहे थे कि विकास के नाम में जो दौलत पैदा हो रही है वह कहाँ जा रही है। गिने हुए कुल २० परिवारों के हाथ में ६६ प्रतिशत औद्योगिक सम्पत्ति, ७९ प्रतिशत बीमा और ८० प्रतिशत बैंक थे। भला अनीति का यह कड़ुवा घूँट पीया जा सकता था? एक ओर यह भयंकर विषमता, और दूसरी ओर भ्रष्ट और स्वार्थी नौकरशाही! अयूब के जमाने में इन्हीं तत्त्वों को बढ़ावा मिला। लोग खुलकर कहने लगे कि पाकिस्तान में 'डाकुओं का पूँजीवाद' है। सिन्धी, पठान, पख्तून आदि सबकी आँखों के काँटे थे 'घृणित पंजाबी', और हर तरफ से यही आवाज आने लगी थी कि पश्चिमी पाकिस्तान को जबरदस्ती एक न रखा जाय, और हर क्षेत्र को विकास का समान अवसर दिया जाय।

इसी तरह की आवाज, लेकिन ज्यादा जोरदार, पूर्वी पाकिस्तान में भी उठी। पूर्वी बंगाल की आवाज ज्यादातर ग्रामीण थी। उसकी नजरों में पश्चिमी पंजाबी 'बाहरी' थे जिन्होंने सब बड़े ओहदे घेर रखे थे। पूर्वी बंगाल पश्चिमी पंजाब का 'बाजार' बना हुआ था। पूर्वी बंगाल के जूट की कमाई का ४० प्रतिशत से अधिक पश्चिमी पाकिस्तान के उद्योगपतियों के हवाले हो जाता था। पूर्वी बंगाल के गृहउद्योग नष्ट हो गये और बेकारी भयंकर रूप में फैल गयी। भूखे बंगाली को अपनी तबाही तो खलती ही थी, उससे अधिक खलता था अपनी भाषा और संस्कृति के प्रति होनेवाला सौतेले बेटे का बर्ताव। बंगाली देखता था कि जब उसका मानस क्षोभ से भरा हुआ था तो कुछ नेता 'बेसिक डेमोक्रेट' कहलाकर अयूबशाही के पिट्ठू बने हुए थे। यही कारण था कि उपद्रव के दिनों में सबसे अधिक प्रहार इन पिछलगुओं पर हुए।

एक के बाद एक कारण जुड़ते गये और परिस्थिति पकती गयी। दस वर्षों के दबे हुए सारे क्षोभ एकसाथ उभड़ उठे। बोलने-लिखने की छूट मिले, चुनाव बालिग मताधिकार से हो, सरकार संसदीय ढंग की बने, पूर्वी बंगाल स्वायत्त हो, आदि माँगें एकसाथ बुलन्द होने लगीं। 'जमाते इस्लामी' की कट्टर धर्मान्धता के मुकाबिले एक इस्लामी धर्मनिरपेक्षवाद की हवा बहने लगी जो नये जमाने के नये मूल्यों की समर्थक थी। कई मुल्लाओं और मौलवियों तक ने अयूबशाही का विरोध किया। जगह-जगह समाजवाद का स्वर सुनाई देने लगा।

यह सब हुआ। महीनों तक अनेक रूपों में लोक-मानस का क्षोभ प्रकट हुआ। लेकिन एक बात विशेष ध्यान देने लायक थी। सिवाय कभी-कभी भुट्टो और असगर खाँ की बहक के, कहीं भारत-विरोधी नारे नहीं लगे। कहीं अल्पसंख्यक हिन्दुओं पर आक्रमण नहीं हुए, बल्कि हुआ यह कि जब अयूब के समय मुस्लिम राजनैतिक बन्दी छोड़े जाने लगे तो उन्होंने आग्रह किया कि हिन्दू बन्दी भी छोड़े जायँ। बात यह है कि पाकिस्तान की लड़ाई सम्प्रदायवाद की नहीं थी, राष्ट्रवाद की भी नहीं थी; थी सचमुच रोटी और इज्जत की, इनसान की तरह जीने का अवसर पाने की। इस व्यापक चाह का प्रतिनिधित्व करनेवाली बंगाली उपराष्ट्रीयता दमनकारी पाकिस्तानी राष्ट्रवाद के मुकाबिले सामने आयी। प्रश्न उठा दोनों में कौन बड़ा है?

www.vinoba.in

राष्ट्र, राष्ट्र के नायक और शासक, या राष्ट्र में रहनेवाले करोड़ों नर-नारी ?

एक ओर जनता का मानस नये आत्मविश्वास और नयी उमंगों से उमड़ रहा था, और दूसरी ओर राजनैतिक नेता यह सिद्ध करने में लगे हुए थे कि वे सही नेतृत्व करने में कितने असमर्थ हैं। वे क्षोभों को उभाड़ सकते हैं, और उन्हें अपनी महत्वाकांक्षा के साथ जोड़ भी सकते हैं, किन्तु वे यह नहीं बर्दाश्त कर सकते कि उनका नेतृत्व न रहे। वे सब कुछ कर सकते हैं, लेकिन जनता को अपने पैरों पर खड़ा होने देने के लिए राजी नहीं होंगे। आज की विरोधवादी राजनीति ध्रुवीकरण (पोलराइजेशन) के सिद्धान्त पर चलती है। नतीजा यह होता है कि अपने साथ-साथ जनता की शक्ति को भी तोड़ देती है। अयूब की तानाशाही के मुकाबिले पाकिस्तान के नेता एक नहीं हो सके। पूर्वी बंगाल की स्वायत्तता,या पश्चिमी पंजाब के क्षेत्रों का बँटवारा, आदि कई प्रश्नों पर एक राय नहीं हो सकी। 'डेमोक्रेटिक ऐक्शन कमिटी' के सदस्यों में स्वयं आपसी मतभेद थे, तथा उनका भुट्टो-भासानी से भी मतभेद था। राजनीति के मतभेदों तथा युवकों के उपद्रवों ने लोक-पक्ष को कमजोर किया, जिसका फायदा उठाकर तथा निहित स्वार्थों का पक्ष और 'पाकिस्तान खतरे में' का नारा लेकर याह्या कूद पड़ा और परिस्थिति पर हावी हो गया। किसी वक्त 'इस्लाम खतरे में' का नारा लगा तो पाकिस्तान बना, और अब 'पाकिस्तान खतरे में' का नारा लगा तो पाकिस्तान की जनता की पुकार कुचली गयी। सत्ता की भूखी यह राजनीति चाहे वह तानाशाह की हो, और चाहे दलों के नेताओं की—खोखली हो चुकी है। उनके सारे क्रिया-कलाप इसीलिए होते हैं कि जनता को कल्याण के भ्रम में रखकर कुछ दिन और अपने को जिन्दा रखें। हर जगह फासिस्टवाद का रास्ता इस राजनीति द्वारा साफ हो रहा है।

जो कुछ होना था, हो गया। अब आगे क्या होगा ? दो ही रास्ते दिखाई देते हैं—याह्या की कृपा या जनता का विद्रोह। कृपा होगी तो चुनाव होंगे, नहीं होगी तो विद्रोह होगा। सचमुच वास्तविक शक्ति विद्रोह की ही है। लेकिन तब, जब विद्रोह खुला और अहिंसक हो। सच्चा लोकतंत्र लोक की शक्ति से आयेगा, बन्दूक की शक्ति से नहीं।

भारत में जो भी अधूरा लोकतंत्र आज तक कायम है उसके पीछे गांधी की आत्मा काम कर रही है। उनके और स्वतंत्रता की लड़ाई के अदृश्य प्रभाव का नेताओं को निरंकुशता पर इतना अंकुश तो है ही कि बालिग मताधिकार पर आघात करने की हिम्मत किसीमें नहीं है। हजार गलत काम हुए हैं, और हो रहे हैं, किन्तु कहीं कोई बात जरूर है जिससे इस देश की रक्षा हो रही है। उस बात का तकाजा है कि भारत की जनता पाकिस्तान के प्रति अपनी दृष्टि बदले। पाकिस्तान हमारा पड़ोसी ही नहीं, मित्र भी है, ऐसी प्रतीति हमें अपने व्यवहार से पाकिस्तान की जनता को करानी चाहिए। सन् १९४६ के लीगी नारे 'इस्लाम खतरे में' का बदला हम सन् १९६९ में 'हिन्दू खतरे में' के नारे से न चुकायें। इस नारे से हम पाकिस्तान-हिन्दुस्तान दोनों का अहित करेंगे। भारत में हिन्दुओं की राजनीति एक नहीं हो सकती, ठीक उसी तरह जैसे पाकिस्तान में मुसलमानों की राजनीति एक नहीं हो सकी। राजनीति अल्प-संख्यकों की एक होती है, बहुसंख्यकों की नहीं। इसलिए दलों की राजनीति से अलग हटकर अब दिलों की लोकनीति की बात सोचनी चाहिए। पाकिस्तान की घटनाओं के असर से कश्मीर में हवा का रुख बदल रहा है। भारत का मुसलान देख रहा है कि पाकिस्तान में क्या हो रहा है। भारत का हिन्दू भी समझ रहा है कि उसके सवाल हिन्दू होने से नहीं हल होंगे, अगर हल होंगे तो मनुष्य होने से। अगर हिन्दू मुसलमान-विरोधी होगा तो हरिजन-ईसाई आदि सब हिन्दू-विरोधी हो जायेंगे। यह परस्पर-विरोध भारत को कहाँ पहुँचायेगा ? परिस्थिति की माँग है कि हम अपना दिल बड़ा करें। यह मानकर चलें कि वह दिन दूर नहीं है जब भारत-पाकिस्तान-हिन्दुस्तान-सिक्किम-भूटान आदि सब पड़ोसी देश एक महासंघ के सदस्य होंगे, और उस महासंघ में भारत और पाकिस्तान दोनों के कई क्षेत्रों और कई समुदायों को अपने निर्णय से अपने ढंग की जिन्दगी जीने की छूट होगी।

संयोग है कि भारत के लिए इस वक्त मनुष्यता की दृष्टि से जो नीति सही है वही कुशल राजनीति की दृष्टि से भी सही है। पाकिस्तान डिक्टेटर-से-डिक्टेटर के हाथ में गया है; हम कोशिश करें कि हमारा यह लोकतंत्र हाथ से न जाने पाये। कौन जाने भविष्य भारत-पाकिस्तान को फिर करीब लाना चाहता हो !•

भारत में ग्रामदान-प्रखण्डदान-जिलादान

(३१ मार्च '६९ तक)

प्रांत	ग्रामदान	प्रखण्डदान	जिलादान
बिहार	४०,८०४	३७१	९
उत्तर प्रदेश	१४,१२६	८२	२
तमिलनाडु	११,६२३	१३४	३
उड़ीसा	९,३४८	४०	—
मध्य प्रदेश	५,१००	२५	२
आन्ध्र प्रदेश	४,२००	१०	—
संयुक्त पंजाब	३,६९४	७	—
महाराष्ट्र	३,४५१	१४	—
असम	१,४८९	१	—
राजस्थान	१,०२१	१	—
गुजरात	८०३	३	—
प० बंगाल	६४४	—	—
केरल	४१८	—	—
मैसूर	५७०	—	—
दिल्ली	७४	—	—
हिमांचल प्रदेश	१७	—	—
जम्मू-कश्मीर	१	—	—
कुल :	९७,३८३	६८८	१६

—कृष्णराज मेहता

www.vinoba.in

समाज बदले, और शीघ्र बदले

आवश्यकता है विनोबा के पीछे शक्ति खड़ी करने की – केवल समर्थन पर्याप्त नहीं

मित्रों के मिलन का दिन है, इसलिए मैं कुछ आपस की बातें आपसे कर लेना चाहता हूँ। सार्वजनिक प्रवचन या भाषण एक अलग चीज है और मित्र के बीच की बातचीत एक अलग चीज है। आप लोगों से मेरा निवेदन है कि जो कुछ मैं कहता हूँ, मेरे साथ उसका थोड़ा गम्भीरतापूर्वक विचार करें।

आज हमारे देश की जो परिस्थिति है, इस परिस्थिति के कारण हर देशप्रेमी मनुष्य का दिल बैठ रहा है। कुछ असमंजस में वह अपने आपको पा रहा है, कुछ खोया-खोया-सा है। समझ में नहीं आ रहा है, क्या करें। असंतोष सबके मन में है, लेकिन किसीको कोई रास्ता साफ दिखाई नहीं दे रहा है। ऐसी परिस्थिति में अपने काम में बम्बई जैसे शहरों में अपने सामने तरुणों को और तरुणियों को देखता हूँ, तो मुझे कुछ आशा होती है।

मेरी अपनी ऐसी धारणा है कि समाज-परिवर्तन का जो आंदोलन विनोबा इस युग में कर रहा है उस तरह का मूलगामी आन्दोलन और इस देश में कोई नहीं कर रहा है। लेकिन फिर भी कुछ ऐसी संकीर्ण भावनाएँ देश में फैल रही हैं, जो वातावरण को इतना जहरीला बना देती हैं कि पता नहीं, ग्रामदान सारे देश में हो जाने के बाद भी इस देश के लोग एक-दूसरे के साथ रहना सीखेंगे या नहीं सीखेंगे! बहुत गंभीर समस्या है और मेरा निवेदन आपसे यह है कि अकेला विनोबा या अकेला जयप्रकाश नारायण इस समस्या को हल नहीं कर सकता। मेरे कुछ मित्र कहते हैं कि ऐसा संकट इस देश के जीवन में शायद ही कभी पैदा हुआ हो। क्यों नहीं जयप्रकाश जैसा व्यक्ति सामने आता? क्यों नहीं वह यह कहता है कि इस देश की परिस्थिति को सम्हाल लूँगा? कौन-कौन मेरे साथ आते हैं, आओ।

समाज शीघ्र बदले

मैं आपसे विश्वास दिलाता हूँ कि जयप्रकाश बाबू जैसा व्यक्ति अगर अपने-आप में यह शक्ति पाता तो वह बगैर इस प्रकार का आवाहन किये नहीं रहता। केवल सिद्धांत के लिए वह यह नहीं कहता कि सत्ता लेना मेरा काम नहीं। लेकिन जिस प्रकार की शक्ति आज इस देश को चाहिए, मैं इस नतीजे पर पहुँचा हूँ, वह शक्ति राज्य की नहीं हो सकती और सेना की भी नहीं हो सकती। एक दृष्टि से बहुत ही भयानक परिस्थिति है कि सेना की भी वह शक्ति न हो। लेकिन एक दृष्टि से हम यह भी कह सकते हैं कि हमारे लिए यह परिस्थिति तब अनुकूल है, जब सैनिक-शक्ति की जगह नागरिक-शक्ति का विकास हो सके। सैनिक-शक्ति की जगह नागरिक-शक्ति का विकास न हो सका तो न सैनिक-शक्ति रही, न नागरिक-शक्ति रही और न राज्य-शक्ति रही। राज्य-शक्ति तो अब, मैं समझता हूँ, आनेवाले एक-दो महीनों में, शून्य-लब्धि तक पहुँच जानेवाली है। जिसे आप 'डिस्इण्टिग्रेशन' कहते हैं, बंगाल में शुरू हो गया है।

दादा धर्माधिकारी

दिल्ली के साथ एक तरह की लड़ाई शुरू हो गयी है, केरल में भी शुरू हो सकती है। मध्यप्रदेश का, बिहार का तमाशा आप देख रहे हैं! अगर इस तमाशे से केवल मनोरंजन होता तो हम आनन्द से देखते, लेकिन यह तमाशा भरसुख तमाशा है। मानो, अपना मकान जल रहा है और हमको तमाशा देखने के लिए कहा जा रहा है! इस तरह की परिस्थिति आज इस देश में है। ऐसी अवस्था में आप और हमको भी आज क्या कुछ सोचना होगा, क्या कुछ करना होगा? लोगों का दुःख दूर करने की, संकट-निवारण की जितनी क्रियाएँ हैं, जितने आन्दोलन हैं—करने होंगे, करने चाहिए। लेकिन आज आवश्यकता है, सबसे बड़ी आवश्यकता है—तुरन्त इस समाज को जड़मूल से बदलने की। आज अगर हम इस समाज को जड़मूल से बदलने का संकल्प नहीं करते हैं तो अब यह देश बचनेवाला नहीं है। क्या आपको आज की सामाजिक स्थिति असह्य मालूम होने लगी है? आज की सामाजिक स्थिति से मेरा मतलब है गरीबी और बेकारी से। इस देश में जो गरीबी और बेकारी है—क्या उसको देखकर अब आपकी सहन-शक्ति अपनी सीमा तक पहुँच गयी है?

क्रान्ति का तीसरा विकल्प : ग्रामदान

यह सवाल हमको अपने से इसलिए पूछना है कि आज गरीबी के नाम पर जितने उपद्रव हो रहे हैं उन सारे उपद्रवों में गरीब यह समझ रहा है कि ये उपद्रव करनेवाले हमारे अभिभावक हैं। क्या हमारे लिए गरीब की यह धारणा है, यह सवाल है? वह हमको सज्जन माने, साधू माने, सच्चरित्र माने, इतना काफी नहीं है। क्या वह यह मानता है कि हम उसके तरफदार हैं? यह अगर भावना हम गरीब और बेकार के मन में पैदा नहीं कर सकेंगे तो हमको सोचना होगा कि हमारे जीवन में, हमारी मनोवृत्ति में और हमारे आचरण में ऐसी कोई कमी जरूर रह गयी है, जिसके सबब से गरीब आदमी उपद्रवकारी को अपना अभिभावक समझता है और हमें नहीं समझता। सारे देश के गरीबों ने गांधी को अपना माना था। उस वक्त भी मजदूरों के संगठन थे, उस वक्त भी मजदूरों की हड़तालें होती थीं, उस वक्त भी किसान-सभाएँ थीं और मजदूर-नेता, किसान-नेता गांधी की कड़ी आलोचना करते थे। लेकिन देश का साधारण मजदूर और किसान गांधी को अपना आदमी मानता था।

आज हमको कहा जा रहा है कि देश के सामने दो ही विकल्प हैं—एक तो पूँजीवादियों की प्रस्थापित, वैधानिक, प्रतिष्ठित हिंसा या फिर जो बेकार हैं, गरीब हैं उनकी अव्यवस्थित, अप्रतिष्ठित, अन्धाधुन्ध हिंसा। क्या हम यह कह सकते हैं कि तीसरा भी कोई विकल्प है? विनोबा ने तीसरा विकल्प दिखा दिया है। उसने यह कहा है कि तीसरा भी विकल्प है।

मेरे मन में इसके विषय में कोई संदेह नहीं है। इस देश में कोई पार्टी ऐसी नहीं है, इस देश में कोई मजदूरों का और किसानों

www.vinoba.in

का संगठन ऐसा नहीं है, जो अपनी सत्ता और सुव्यवस्था इस देश में कायम कर सके। उपद्रवों से क्या होगा ? अराजकता आयेगी। आज पुलिस और फौज साधारण मनुष्य को कोई संरक्षण नहीं दे सक रही है। साधारण मनुष्य की न जान सुरक्षित है, न माल सुरक्षित है। उपद्रवकारियों का वह जब तक विरोध नहीं करता है तभी तक सुरक्षित है। जिस दिन उपद्रवकारियों के सामने वह खड़ा हो जायगा, वह सुरक्षित नहीं है। न पुलिस उसका संरक्षण कर सकती है, न फौज उसका संरक्षण कर सकती है। ऐसी परिस्थिति में अराजकता के बाद सत्ता--सत्ता से मेरा मतलब प्रभाव--उन लोगों का होगा, जिनमें उपद्रव करने की शक्ति है। देश-भक्ति से कोई मतलब नहीं, क्रान्ति से कोई मतलब नहीं। लेकिन यह परिस्थिति ज्यादा दिन नहीं ठहरेगी। इस परिस्थिति के बाद अगर व्यवस्था आयेगी तो उस व्यवस्था में दो सत्ताएँ प्रमुख होंगी--एक चीन की और दूसरी पाकिस्तान की। इसके आकार, इसके चिह्न आज हमें दिखाई दे रहे हैं। जहाँ-जहाँ पर आज अपने हाथ में परिस्थिति लेने की कोशिश लोगों की भीड़ कर रही है, वहाँ पर दो नारे चल रहे हैं। असल में नारा एक ही ज्यादा चल रहा है, माओ का। लेकिन जो माओ का नारा लगाते हैं, उनका आज मुस्लिम संप्रदायवादी संस्थाओं के साथ गठ-बंधन है। हमारे पड़ोस में, सीमा के उस पार जो परिस्थिति है--चीन और पाकिस्तान के गठबंधन की--उस परिस्थिति की परछाईं, उसका प्रतिबिम्ब देश की अंतर्गत परिस्थिति पर भी पड़ रहा है।

भारतीय क्रान्ति की प्रेरणा भारत में मौजूद

एक तरफ हिंदू सम्प्रदायवाद है। बहु-संख्या का सम्प्रदायवाद है, इसलिए अधिक भयानक है। लेकिन दूसरी तरफ उससे कहीं अधिक भयानक मुस्लिम सम्प्रदायवाद है, जिसमें 'एक्स्ट्रा टेरिटोरियलिज्म' भी मिला हुआ है। 'एक्स्ट्रा टेरिटोरियलिज्म' से मेरा मतलब भारत-बाह्य निष्ठा, यह विश्वनिष्ठा नहीं है। मैं संकुचित संकीर्ण राष्ट्रवाद का हिमायती नहीं हूँ। लेकिन जिसे भारत में बाह्य निष्ठा कहते हैं, वह इस देश के माओवादी भी हैं और मुसलमान सम्प्रदायवादी भी हैं। मैं सभी मुसलमानों की बात नहीं कर रहा हूँ। जैसे सम्प्रदायवादी हिंदुओं की बात मैंने कही, सम्प्रदायवादी हिंदुओं की जैसी एक जमात है, वैसी ही सम्प्रदायवादी मुसलमानों की एक जमात है, ये पाकिस्तानवादी हैं। अराजकता से लाभ इन्हींका होनेवाला है। और मेरा और आपका काम है लोगों को यह समझाना। इसमें इस देश के गरीब की कोई भलाई नहीं होनेवाली है। ये दोनों ईमानदार हो सकते हैं। मुझे पता नहीं--मैं किसीको बेईमान नहीं कह रहा हूँ। शायद वे अपने दिल में यह मानते होंगे कि चीन की सहायता से यहाँ जो सत्ता स्थापित होगी वह सत्ता भारतीय होगी, प्रभुत्व चीन का होगा--उस सत्ता के द्वारा इस देश के गरीब की वे भलाई कर सकेंगे। लेकिन यह भ्रम है।

दुनिया के इतिहास में अभूतपूर्व घटना घटी है--दो कम्युनिस्ट देशों का आपस में युद्ध। यह कभी हुआ था दुनिया के इतिहास में ? कभी सुना था आपने ? कभी मार्क्स ने सपने में भी यह सोचा होगा कि दो समाजवादी देश हो सकते हैं और उनका भी एक-दूसरे के साथ युद्ध हो सकता है ? लेकिन हो रहा है। चीन और रूस एक होते तो शायद दुनिया में, आज अधिकांश दुनिया में कम्युनिज्म का सिक्का चल जाता। इन दोनों का युद्ध जिस बात का द्योतक है कि अब किसी विदेशी सत्ता के भरोसे देश के गरीब का कल्याण नहीं होगा। चीन के विषय में जानकारी कुछ है नहीं। लेकिन मेरी तो अक्ल नहीं काम करती कि चीन के नेता क्या सोच रहे होंगे ? वे हरेक से लड़ाई मोल ले रहे हैं। किसके भरोसे ? किस चीज का भरोसा है ? ऐसी कौनसी शक्ति उनके पास है कि जिसके भरोसे वे दुनिया भर से लड़ाई मोल ले रहे हैं ? उनके पास कोई ऐसी गुप्त ताकत हो, जिसका हमें पता न हो। लेकिन वह तो उनके अपने भरोसे की बात है। हमारा देश अपने भरोसे कुछ नहीं कर सकना--मानो, इस बात को घोषित कर रहे हैं ये नेता, जो चीन के नारे लगा रहे हैं। क्योंकि जो दूसरे हैं, जो चीन के नारे नहीं लगा रहे हैं, उन्होंने भी आज तक हमको यही सिखाया कि बगैर रूस और अमेरिका के, यह देश अपने भरोसे नहीं जी सकता, तो क्या हमारे सामने यही विकल्प है ? इसको सोचने की जरूरत है। और अगर यह विकल्प नहीं है तो अब वह दिन आ गया है, जब विनोबा के पीछे सबकी शक्ति खड़ी होनी चाहिए। केवल समर्थन से अब काम नहीं चलेगा। मैंने आपसे निवेदन किया कि आज की तुरन्त आवश्यकता है समाज-परिवर्तन। अगर समाज-परिवर्तन हो जाता है तो माओ का नारा बेकार हो जाता है। लेकिन जिस बिहार में विनोबा रोज ग्रामदान करता है, उसी बिहार में, उन्हीं ग्रामदानी गाँवों में बेदखलियाँ चल रही हैं। उन्हीं गाँवों में सत्ताधारी और सम्पत्तिधारी उसके काम को बिगाड़ने की कोशिश कर रहे हैं। आप यह नहीं समझिए कि शहर का इससे कोई सम्बन्ध नहीं। उन गाँवों की तरफ, उनकी समस्याओं की तरफ अब बम्बई, कलकत्ता, मद्रास, बंगलोर, हैदराबाद, दिल्ली के शहर-निवासी अगर ध्यान नहीं देंगे तो गाँव तो खो ही जायेंगे, और गाँव खो जायेंगे तो जिन गाँवों की बुनियाद पर ये शहर खड़े हुए हैं, वे पत्ते के बंगले जैसे गिर जायेंगे।

[बम्बई : कार्यकर्ताओं के बीच]

अहिंसक क्रान्ति और नयी समाज-रचना हेतु

अध्ययन और चिन्तन के लिए सर्वोदय के मनीषी दादा धर्माधिकारी की पुस्तकें अवश्य पढ़ें :

सर्वोदय-दर्शन	५.००
अहिंसक क्रान्ति की प्रक्रिया	४.००
मानवीय निष्ठा	२.००
लोकनीति-विचार	२.००
लोकतंत्र : विकास और भविष्य	२.००
स्त्री-पुरुष सहजीवन	२.५०
गांधी-पुण्य-स्मरण	०.७५

पुस्तकों के लिए लिखिए—

सर्व सेवा संघ प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी -१

www.vinoba.in

सामाजिक टकराव और गांधीजी

ए० के० दासगुप्ता

कम-से-कम एक जीवनी-लेखक ने गांधीजी की मार्क्स के साथ तुलना की है। लुई फिशर ने कहा है—'गैर-अधिकारी वर्ग के लोगों में से जिस व्यक्ति का मनुष्य के मन पर प्रभाव पड़ा है, उसमें गांधी की तुलना में सिर्फ कार्ल मार्क्स का नाम आता है।'[1] यह तुलना मौजूं है। लेकिन जिस प्रकार के मूल्यांकन को मद्देनजर रखकर लुई फिशर ने यह तुलना की है उसे बहुत दूर तक लागू किया जा सकता है, इसमें शक है। जितना मार्क्स का मनुष्य के मन पर प्रभाव पड़ा उसके साथ गांधी के प्रभाव की तुलना की जा सकती है, यह कहना बहुत हद तक गलत होगा। आज मानव-समाज का लगभग आधा हिस्सा मार्क्स के बताये रास्ते पर चल रहा है। मानव-समाज के बाकी हिस्से में भी यह धारणा जमती जा रही है कि मार्क्स ने जैसे समाजवादी समाज की कल्पना की थी, यद्यपि उसमें पूंजी और श्रम का द्वंद्व-विभाजन अप्रासंगिक है, तो भी वह समक्ष में आने लायक और व्यावहारिक भी है। दूसरी ओर गांधीजी ने जो बातें सिखायीं वे अस्पष्ट रूप में बहुत लोगों तक पहुंचीं, लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि उनके कारण लोगों के दिमाग में ऐसी कोई हलचल पैदा हुई हो, जो उनमें सक्रियता लाने का आधार बनी हो।

इसमें कोई शक नहीं कि स्वतंत्रता की लड़ाई के प्रसंग में सन् १९२० से '३० के दौरान भारत में गांधी के बताये ढर्रे पर बहुत-से काम हुए। किन्तु स्वतंत्रता प्राप्त करने का सारा श्रेय गांधी के प्रभाव की देन को देना ऐतिहासिक दृष्टि से अतिशयोक्ति की बात होगी। गांधी के कार्यक्रम के साथ-साथ उन दिनों भारतीय आतंकवादियों का आन्दोलन भी मौजूद था, जो बाद में श्री सुभाषचन्द्र बोस की भारतीय राष्ट्रीय सेना (आई० एन० ए०) में रूपांतरित हुआ। नौसेना का विद्रोह भी एक आन्दोलन था, जिसका आजादी के आन्दोलन पर असर पड़ा। आजादी मिलने के बाद भारत में जो सामाजिक और आर्थिक कार्यक्रम चालू हुए उन पर गांधीजी की बतायी हुई बातों का कोई खास असर रहा हो, यह भी नहीं कहा जा सकता। पंचवर्षीय योजनाओं की चाहे जो भी उपलब्धि हुई हो, वे गांधी की योजना नहीं हैं।

भारत के बाहर दुनिया के एकाध हिस्से में दबे हुए लोगों ने बलवान लोगों के खिलाफ संघर्ष करने में गांधीजी के नाम का इस्तेमाल किया है, लेकिन यह सब छिटपुट ढंग से हुआ और उसका अभी तक कोई गहरा असर नहीं प्रकट हुआ है।

टकराव की सामाजिक परिस्थिति

इतना सब होते हुए भी मैं मानता हूं कि गांधीजी के सामाजिक सिद्धांतों के कुछ ऐसे पहलू हैं, जो कार्ल मार्क्स के सिद्धान्तों के बहुत करीब पहुंचे हुए दिखाई देते हैं। यहां पर मैं गांधी और मार्क्स में तुलना करना मौजूं मानता हूं, क्योंकि मार्क्स और गांधी, दोनों सामाजिक टकराव (कान्फ्लिक्ट) को एक तथ्य के रूप से कबूल करते हैं और दोनों ने इसके निराकरण के लिए अपने-अपने कार्यक्रम निर्धारित करते समय वैज्ञानिक रुख अख्तियार किया है।

गांधीजी ने वैज्ञानिक रुख अख्तियार किया, यह सुनकर बहुत लोगों को हैरत होगी। सभी देखनेवालों को गांधीजी एक प्रज्ञावान व्यक्ति के रूप में दिखाई दिये, जो प्रकाश के लिए अन्तःप्रेरणा या अन्तरात्मा की 'भीतरी आवाज' पर निर्भर करते थे। और, गांधीजी यही कहा भी करते थे। इतना सब होते हुए भी गांधीजी अवश्य ही एक वैज्ञानिक थे। क्या उन्होंने अपने सारे जीवन का 'सत्य के प्रयोग' के रूप में उल्लेख नहीं किया है? यदि कठिनाई की घड़ियों में अन्तःप्रेरणा ने उनकी सहायता की तो इसे उन्होंने अवलोकन, अनुभव और परीक्षण के द्वारा

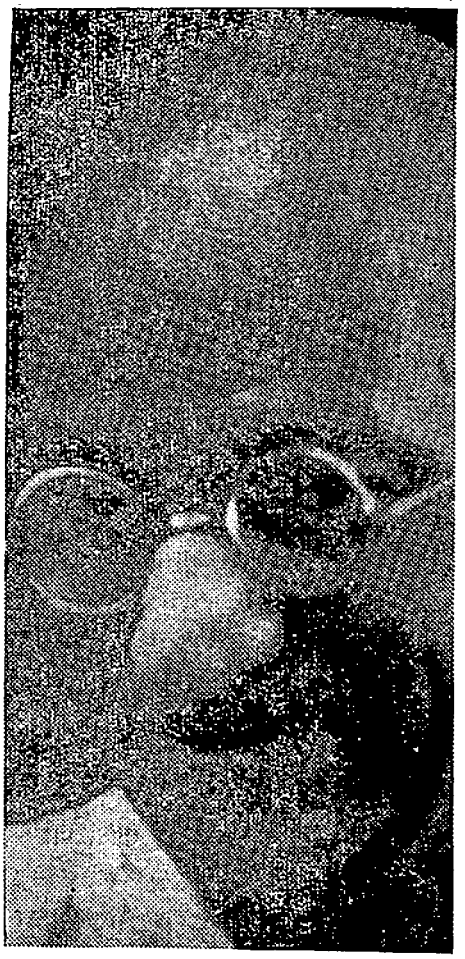

मो० क० गांधी : टकराव का विकल्प

समझा था और ये ही वैज्ञानिक खोज के अत्यावश्यक पहलू हैं।

गांधीजी ने समाज में टकराव (कान्फ्लिक्ट) को देखा और बताया कि यह टकराव तीन दायरों में मौजूद है—(१) उद्योग में मजदूर और मालिक के बीच, (२) खेती में रैयत और जमींदार के बीच, और (३) देहातों और शहरों के बीच। टकराव के तीसरे दायरे का हवाला देकर दरअसल गांधी मार्क्स से एक कदम आगे निकल गये।[2]

खेती में काम करनेवाला मजदूर खेती की मजदूरी से भले ही गरीबी का जीवन बिताये, लेकिन जमींदार को खेती की पैदावार का ज्यादा-से-ज्यादा हिस्सा मिले, इसीमें उसका स्वार्थ है। पूंजीपति का स्वार्थ इसमें है कि मिल की आमदनी का ज्यादा-से-ज्यादा

१. लुई फिशर : "दी लाइफ ऑफ महात्मा गांधी" : पृष्ठ—३९७

२. "सिलेक्शन्स फ्राम गांधी" : पृष्ठ—७९

हिस्सा उसे मिले और उसमें काम करनेवाले मजदूर जैसे-तैसे जिन्दा रहने भर की मजदूरी पायें। इसी तरह देहात के लोगों से कारोबार करते समय शहर के लोग अपने लिए सुविधाजनक शर्तें रखते हैं। गांधीजी ने इस बात को भांप लिया था कि औद्योगीकरण की प्रक्रिया में एक ओर मजदूरों का, और दूसरी ओर खेती का शोषण होता है। आधुनिक औद्योगीकरण मजदूरों को कम मजदूरी देने और उद्योग के लिए जरूरी कच्चे माल की सस्ती कीमत चुकाने पर टिका हुआ है और इससे पूंजीपतियों को सबसे ज्यादा लाभ मिलता है।

अगर गांधीजी मशीनों के खिलाफ हैं, तो इसलिए कि उनका आज की अर्थ-व्यवस्था में खास उपयोग है और मशीनें पूंजीपतियों के शोषण का जरिया बनती हैं। दरअसल गांधीजी मशीनों के खिलाफ नहीं हैं। अगर कोई मालिक खुद किसी मशीन का उपयोग करता है और किसी बाहरी मजदूर का अपनी मशीन पर इस्तेमाल नहीं करता तो वह मशीन शोषण का साधन नहीं होती। गांधीजी ऐसी मशीनों के लिए अपना आशीर्वाद देते हैं। उन्होंने कहा है—"मेरा मकसद यह नहीं है कि हर तरह की मशीनों का खात्मा हो जाय, बल्कि उनके उपयोग की मर्यादा तय की जाय। उन्होंने सिलाई की मशीन की मिसाल देते हुए कहा कि अबतक जितनी चीजों का आविष्कार हुआ है, उनमें से यह एक काम की चीज है।"[३]

टकराव से बचाव

अब यह सामाजिक टकराव कैसे खत्म हो? इस मामले में गांधीजी के विचारों के दो मुद्दे हैं, जिन्हें साफ-साफ समझने की जरूरत है। पहला मुद्दा उनकी ट्रस्टीशिप की बात है और दूसरा मुद्दा है अनाक्रामक प्रतिकार (पैसिव रेसिस्टेंस) का। यह सही है कि गांधीजी हमेशा दोनों को एक-दूसरे से अलग नहीं करते। उन्होंने अकसर अनाक्रामक प्रतिकार को शोषितों द्वारा ट्रस्टीशिप की भावना को मजबूत बनाने के साधन के रूप में माना है। गांधीजी ने जो कुछ लिखा है, उसमें निश्चय ही ऐसे अंश मौजूद हैं, जो यह जाहिर करते है कि उनके मन में जिस अच्छे समाज का नक्शा है, उसमें सिर्फ इतना ही नहीं है कि कहीं किसीका शोषण नहीं होगा, बल्कि किसीके मन में टकराव की भावना भी नहीं होगी—जो अबतक शोषक हुआ करते थे, उनमें एक नया विश्वास पैदा होगा, जिससे वे अपनी संपत्ति को एक ट्रस्ट के रूप में देखेंगे।

गांधीजी के विचारों को सफाई से समझने के लिए यह बहुत जरूरी है कि गांधीजी के इस आदर्श चित्र और असहयोग तथा निष्क्रिय प्रतिरोध के सिद्धांत के अन्तर को जान लिया जाय। असहकार और अनाक्रामक प्रतिरोध की खास विशेषता यह है कि वह समाज में टकराव की स्थिति को मद्देनजर रखते हुए प्रस्तुत हुआ है। सामाजिक सम्बन्धों का एक वास्तविक, अतः वैज्ञानिक मूल्य-मापन (एसेसमेण्ट) है। और यहीं पर गांधीजी और मार्क्स की तुलना की सार्थकता सिद्ध होती है।

यह दुर्भाग्यजनक है कि भारत के स्वतंत्र हो जाने के बाद जिन लोगों ने गांधीजी के विचारों को देश में फैलाने की कोशिश की, उदाहरण के लिए सर्वोदय का काम करनेवाली जमात को ले लें, वे लोग गांधीजी के ट्रस्टीशिप के विचार को ही सामने ला रहे हैं। इन लोगों द्वारा गांधीजी दुनिया के सामने एक आदर्शवादी और द्रष्टा की शकल में पेश किये जा रहे हैं।

मार्क्स और गांधी में मतैक्य

जो पद्धति यह मानकर बनी हो कि आमतौर से आदमी अपने निजी स्वार्थ को छोड़ देने के लिए राजी किया जा सकता है, उसे कोई गम्भीरतापूर्वक कैसे कबूल कर सकता है? एक बार श्री आल्फ्रेड मार्शल कह चुके हैं कि "किसी सामाजिक नीति की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि वह मानव-स्वभाव की न सिर्फ उदात्त, बल्कि बलवान शक्तियों का भी उपयोग करती हो।"[४] शोषण समाप्त करने के प्रति मानव-स्वभाव में निहित प्रचण्ड इच्छा-शक्ति को मार्क्स ने वर्गों के टकराव को मिटाने के कार्यक्रम में प्रयुक्त होने के लिए पेश किया। गांधीजी के अनाक्रामक प्रतिकार के पीछे भी यही दर्शन विद्यमान है। असहयोग और सिविल नाफर्मानी को सामाजिक टकराव को समाप्त करने का 'उचित और अजेय साधन' बताते हुए गांधीजी कहते हैं—"समाज में गरीबों का सहयोग पाये बिना धनी लोग धन इकट्ठा करने में सफल नहीं हो सकते, यदि यह ज्ञान गरीबों को हो जाय और उनके अन्दर असर जमा ले तो गरीब ताकतवर हो जायेंगे। और यह सीख लेंगे कि कैसे अपने को उस परिस्थिति से आजाद करें।"

गांधीजी का चरखे का कार्यक्रम आत्मनिर्भरता और स्वावलम्बन का प्रतीक है, यह एक ऐसा औजार है, जिससे समाज का कमजोर आदमी भी पूरी ताकत के साथ शोषण का सामना कर सकता है। यदि जमींदार ठीक आचरण नहीं करता तो जमीन जोतनेवालों को कहा जाता है कि वे भूमि-कर न दें। गांव के लोगों को बताया जाता है कि अगर नगरों के उद्योगपति व्यापार की सुविधाजनक शर्तें नहीं मानते तो उनके साथ कारोबार बन्द कर दें। कारखाने में काम करनेवाले मजदूर को मिल-मालिक से निपटने के लिए यही तरकीब सुझायी जाती है और अंत में अंग्रेजी राज के लिए भी यही बात समूचे देश के लोगों को समझायी जाती है। इस प्रकार असहयोग और प्रतिरोध को शोषण से मुक्ति पाने के हथियार के रूप में प्रस्तुत किया गया है और इसे कारगर बनाने के लिए आत्मनिर्भरता तथा स्वावलंबन का दार्शनिक आधार प्रदान किया गया है।

इन सभी मामलों में गांधीजी और मार्क्स के उपदेशों में साफ-साफ सामीप्य है। दोनों समाज में व्याप्त टकराव की वस्तुस्थिति के प्रति सजग हैं और दोनों शोषण के मुकाबले के लिए एक ही साधन-शोषितों को इस्तेमाल करते हैं।[५] दोनों की भावना क्रांतिकारी है। दोनों में जो फरक है और वह निश्चय ही

---

३. "सिलेक्शन्स फ्राम गांधी" : पृष्ठ ७९

४. आल्फ्रेड मार्शल : "इण्डस्ट्री ऐण्ड ट्रेड", पृष्ठ-६६४

५. गांधीजी का ट्रस्टीशिप का विचार इससे भिन्न चीज है। ट्रस्टीशिप में गांधीजी शोषकों को ही वर्ग-वैषम्य मिटाने का माध्यम बनाते हैं।

बुनियादी है, वह है दोनों की भावी समाज की धारणा का फरक।

www.vinoba.in

मार्क्स और गांधी में अन्तर

मार्क्स की परियोजना में बड़े पैमाने की उत्पादन-व्यवस्था कायम रहती है, लेकिन उसकी पूँजी (जिसमें जमीन भी शामिल है) व्यक्ति के हाथों में न होकर समाज के हाथों में रहती है। मार्क्स ने दलील दी है कि पूँजीवादी पद्धति के विकास में ही यह बात छिपी हुई है कि उसमें मजदूर-वर्ग रहेगा। समाज-रचना को पूँजीवादी से समाजवादी बनाने के लिए ऐसी व्यूह-रचना की गयी है कि मजदूर-वर्ग बगावत द्वारा मालिकों की संपत्ति जब्त करके अपने वर्ग की मालिकी स्थापित करे। इसके विपरीत गांधीजी ने ऐसे सामाजिक ढाँचे की बात रखी है, जिसमें व्यक्ति का निजी स्वामित्व रहेगा। लेकिन वह उतनी ही संपत्ति रख सकेगा, जितनी वह खुद इस्तेमाल कर सकता है।

जब खेती करनेवाले लोग अपने खेत के मालिक होते हैं तो ऐसा ही होता है। इसमें जमींदार और रैयत के सम्बन्ध समाप्त हो जाते हैं। उद्योग के क्षेत्र में इसे लागू करने के लिए ग्रामोद्योगों को विकसित करना होगा, ताकि जो लोग उद्योग में लगे हैं, वे अपने ही साधनों से काम कर सकें।

जिस प्रक्रिया द्वारा यह सामाजिक रूपांतर होगा उसके बारे में भी गांधी और मार्क्स की अलग-अलग दृष्टियाँ हैं। मार्क्स ने उद्योग-पतियों और मजदूरों के बीच युद्ध का प्रतिपादन किया है। गांधीजी की प्रक्रिया अहिंसात्मक है। कर्मचारी द्वारा जिस प्रतिरोध का अनुसरण होगा वह मार्क्स के संघर्ष के ढंग का ही होगा। लेकिन उसके अन्तर्गत किसी ऐसी हिंसात्मक क्रिया का उपयोग नहीं होगा, जो मार्क्स ने सुझाया है।

इस मामले में सिर्फ एक ही गुत्थी और रह जाती है कि औजारों के उत्पादन का क्या होगा? क्या गांधीजी की पद्धति में कारखानों के काम को एकदम तिलांजलि दे दी गयी है? वस्तुओं के उत्पादन को सम्भव बनाने के लिए जिन औजारों और यंत्रों की जरूरत होगी वे कितने भी आसान हों, फिर भी क्या बिना किसी बड़े पैमाने की प्राद्योगिकी के उनका उत्पादन सम्भव होगा? और बड़े पैमाने की प्राद्योगिकी रहेगी तो बड़े पैमाने के कल-कारखाने और श्रमिक भी तो रखने ही पड़ेंगे?

गांधीजी ने जब सिलाई की मशीन को अपनी मान्यता के अन्दर माना तो उनसे पूछा गया कि जो कारखाना सिलाई की मशीन बनायेगा, उसके बारे में आप क्या कहते हैं? गांधीजी ने जवाब दिया कि हाँ, वह तो रहेगा, लेकिन मैं इतना समाजवादी हूँ कि कह सकूँ कि वह कारखाना राष्ट्रीयकरण या राज्य के नियंत्रण में रहना चाहिए।

प्रतिकार का युद्ध या शोषण की समाप्ति करने के औजार के रूप में कितनी उपादेयता है, इसके बारे में कोई कुछ भी कह सकता है और गांधीजी जिस तरह का समाज बनाना चाहते हैं, उसकी आर्थिक सम्भावनाओं के बारे में भी कोई कुछ कह सकता है; लेकिन इस सन्दर्भ में कुछ कहनेवाले को भारत की इस परिस्थिति को ध्यान में रखकर ही कुछ कहना होगा कि यहाँ इफरात श्रम-शक्ति मौजूद है। भारत की परिस्थिति में गांधीजी ने एक यथार्थवादी और ऐसा सम्यक् दर्शन दिया है, जो न सिर्फ मानव-स्वभाव की सिर्फ 'उदात्त भावनाओं' पर, बल्कि 'शक्तिशाली' प्रेरणाओं पर भी आधारित है। यह खेदजनक बात है कि गांधीजी के विचारों का यह पहलू आज के भारत के सामने नहीं रखा जा रहा।

["इकोनोमिक ऐण्ड पोलिटिकल वीकली" के ७ दिसम्बर '६९ के अंक में प्रकाशित अंग्रेजी लेख से] अनुवादक—रुद्रभान

रचनात्मक कार्यकर्ताओं द्वारा मध्यप्रदेश-दान की योजना

२० से २४ मार्च, '६९ तक छतरपुर में आयोजित मध्यप्रदेश-गांधी-स्मारक-निधि के कार्यकर्ता-नवसंस्कार-शिविर में उपस्थित कार्यकर्ताओं ने घोषणा की कि हम सब कार्यकर्ता गांधी-शताब्दी-वर्ष में पूज्य महात्मा गांधी के ग्राम-स्वराज्य और अहिंसक समाज-रचना के लिए गांधी-शताब्दी-दिवस पुण्यपर्व २ अक्तूबर, '६९ तक मध्यप्रदेश-दान के महान् संकल्प की पूर्ति के लिए कृतसंकल्प हैं।

प्रदेशदान के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उन्होंने निम्न निर्णय लिये—

- प्रदेश में एकसाथ सभी जिलों में जिलादान के लिए व्यापक अभियान शुरू हों, इसके लिए जिलास्तरीय गोष्ठियाँ, परिसंवाद, शिविर-सम्मेलन और बैठकों आदि का आयोजन करेंगे और समस्त शासकीय-अशासकीय कार्यकर्ताओं के सहयोग से विकास-खण्ड-स्तर और पंचायत-स्तर पर ग्रामदान-प्राप्ति-शिविरों और यात्राओं का संयोजन करेंगे।
- प्रदेश में प्रदेश-स्तरीय संस्थाओं के सहयोग से कुछ जिलों में कम-से-कम समय और अवधि में जिलादान प्राप्त हों, इस दृष्टि से जिलादान के लिए सघन अभियानों का आयोजन करेंगे।
- प्रदेश के जो जिले दान में आ गये हैं, उनमें स्थानीय कार्यकर्ताओं, संस्थाओं और शासन के सहयोग से जिलादान-पुष्टि-अभियान का आयोजन करेंगे, जिसके अन्तर्गत ग्रामसभा-संगठन, ग्रामकोष-संग्रह, भूमिहीनों में भूमि-वितरण, पुलिस-अदालत-मुक्ति, ग्राम-भिमुख खादी, ग्रामोद्योग, मद्य-निषेध, भंगी-मुक्ति तथा स्त्री और युवक-शक्ति के जागरण के लिए विविध कार्यक्रमों का संगठन करेंगे।
- प्रदेश के सब गाँवों में सर्वोदय का सन्देश पहुँचाने के लिए पंचायतों, सहकारी-समितियों, शिक्षण-संस्थाओं तथा ग्रामसभाओं आदि के माध्यम से पाक्षिक 'शताब्दी-सन्देश' के साथ कुछ चुना हुआ सर्वोदय-साहित्य पहुँचाने का प्रयास करेंगे।
- प्रदेश में शांति-सेना के संगठन के लिए नगरों और कस्बों के विद्यालयों में तरुण-शांति-सेना तथा ग्रामों में ग्राम शान्ति-सेना का संगठन करेंगे तथा इसके लिए उत्सुक नागरिकों से संकल्प-पत्र प्राप्त करेंगे।
- प्रदेश में बुद्धिजीवियों और विशेषतः शिक्षकों की शक्ति प्रकट हो, उनकी प्रतिष्ठा बढ़े और देश के नवनिर्माण में उनकी प्रतिभा का लाभ मिले, इस दृष्टि से 'आचार्य-कुल' के संगठन में मदद करेंगे।
- प्रदेश में शान्ति-सेना तथा सर्वोदय-विचार-सम्पन्न कार्यकर्ताओं का समूह बढ़े, इस दृष्टि से इस वर्ष मध्यप्रदेश के हर सम्भाग में गांधी-शताब्दी-विद्यालय के दो सत्र चलाने का प्रयास करके कम-से-कम २५० कार्यकर्ताओं को प्रशिक्षित करेंगे।

www.vinoba.in

भागलपुर जिलादान शीघ्र सम्पन्न होने की आशा

१७ फरवरी को विनोबाजी का सुलतानगंज गंगावाट पर भागलपुर जिला-निवासियों ने स्वागत किया था और २६ मार्च को बाँका डाकबंगला से विदाई दी। बाबा का पड़ाव जिलादान हेतु इस बार भागलपुर जिले में ४० दिन का रहा।

१८ फरवरी को नाथनगर, २२ फरवरी को शाहकुण्ड, १९ मार्च को अमरपुर और २६ मार्च को कटोरिया, घोरैया, बाँका, बाराहाट, जगदीशपुर और कहलगाँव, इस तरह कुल ९ प्रखंड दान में मिले।

अब ८ प्रखंड बाकी रहे हैं, जिनमें से कुछ एक सप्ताह में और कुछ दो सप्ताह में पूरा कर देने का आश्वासन मिला है। विदाई सभा में प्रो० रामजी सिंह गिना रहे थे कि किस प्रखंड में काम कैसे किन सज्जनों ने पूरा किया है। वहाँ के प्रतिनिधि सामने आकर दो शब्द बोलते और बाबा को प्रखंड समर्पित करते जाते थे। कहीं प्रखंड-पंचायत-प्रमुख, कहीं प्रखंड-विकास अधिकारी, कहीं प्रखंड-शिक्षा-प्रसार अधिकारी और कहीं खादी-संस्था को काम पूरा करने का श्रेय रहा है। जिला-शिक्षा अधिकारी श्री अतुल बाबू ने यहाँ जब बाबा से शुरू में भेंट की थी तभी बाबा ने उनके कन्धे अपने आशीर्वचनों से मजबूत कर दिये : "आपको दरभंगा से इस जिले में भेजा गया है, यह ठीक ही हुआ। बाबा का काम यहाँ पूरा करना होगा।" श्री अतुल बाबू दरभंगा जिलादान-अभियान के समय उस जिले में ही नियुक्त थे। इसलिए उन्हें ग्रामदान-प्राप्ति की कार्यपद्धति और भावना, दोनों ही पूँजी प्राप्त थी। १८ फरवरी से सतत जिले भर में वे दौरा करते रहे। संभव हुआ तो कभी कृष्णराजजी, कभी रामजी बाबू साथ हो लिये। यहाँ शिक्षक संघ ने बाबा की वाणी को—"शिक्षक इस क्रांति के अग्रदूत बनें"—चरितार्थ किया है। शिक्षकों की मदद रही तभी इस गति से काम हो सका।

इन ४० दिनों में स्वयं भाई रामजी सिंह कितनी रातें ५ घंटे की नींद भी ले पाये होंगे! कुछ रातें तो प्रखंडदान की धुन में किसी-न-किसी प्रखंड-पड़ाव पर ही बीतीं। घर से एक छोटी-सी दरी और एक चादर का बिछौना और कागजों के झोले का तकिया। दिन भर की दौड़-धूप से थका हुआ, काम की चर्चा करते-करते रात को १० बजे के बाद नींद के आक्रमण से लाचार होकर जो सोयेगा उसे बिस्तर-बिछौने का होश ही क्या!

बाबा ने कार्यकर्ताओं का तप कैसे अपने हृदय में संजो रखा है वह कभी-कभी प्रकट हो जाता है। ता० २५ को बिहार खादी-ग्रामोद्योग संघ के अध्यक्ष श्री गोपालजी झा शास्त्री जब बाबा से मिले तब बाबा ने कहा—"अभी १४ प्रखंड बाकी हैं और बाबा की यहाँ से विदाई में भी १४ ही घंटे बाकी हैं। बाबा अब रामजी को इस जिम्मेवारी से मुक्त होने को कहेगा। आपको किसी दूसरे पर यह बाकी काम सौंपना चाहिए, नहीं तो आप आदमी खोयेंगे। (यह कहते बाबा ने स्वर्गीय भाई कर्मवीर की याद की!) रामजी न पूरा सो पाता है, न ही पूरा खा पाता है। उसे कालेज की अपनी जिम्मेवारी अलग निभानी पड़ती है। इस तरह वह टूट जायेगा। यह 'बर्निङ्ग दी कैण्डल एट बोथ एण्ड्स' होगा।

इस जिले में पूरे समय के कार्यकर्ता तो ५-६ ही हैं। कुछ थोड़े दिनों के लिए पूर्णिया और मुंगेर से भी कार्यकर्ता मदद में आये। जमुई (मुंगेर) के निवासी, स्वराज्य आंदोलन के सेनानी श्री गिरधर बाबू, सत्ता की राजनीति में जिनका अब तक प्रभावशाली स्थान था, अब लोकनीति के अग्रदूत बनकर सतत बाँका अनुमंडल में गाँव-गाँव जाकर बड़े लोगों का शंका-समाधान करने में लगे रहे हैं।

अंत में विनोबाजी ने कहा—"जिन सज्जनों ने साथ मिलकर काम को सफल किया उनको मैं धन्यवाद देता हूँ। बाकी काम ५–१० दिन में पूरा करने का आप लोगों से वचन मिला है। एक बात कहूँ कि यह जो काम हुआ है, आगे के एक महान काम की बुनियाद है। हमें ग्रामस्वराज्य खड़ा करना है, जिसमें सरकारी शक्ति से भिन्न लोकशक्ति बनेगी। पंथ, पार्टी में बँटी राजनीति समाप्त होगी। हमको अब आगे के काम के लिए कमर कसनी है, नहीं तो डूब जायेंगे। आराम तो नदी के उस पार जाकर ही होगा। जबतक भारत में लोकशक्ति की स्थापना नहीं होती, लोकजी— निष्ठावान नहीं बनता तबतक आराम कहाँ?

"देह आराम चाहता है, यह उसका स्वभाव है। हमें उसे बार-बार गति देनी पड़ती है। शरीर रोज मैला होता है, हम उसे नहलाकर शुद्ध करते हैं। हममें और देह में यह लड़ाई सदा बनी है। लोग कहते हैं—मालिक मजदूर में झगड़ा है, अमीर-गरीब की लड़ाई है। लड़ाई तो देह और आत्मा के बीच है। शरीर नीचे खींचता है। हमें शरीर को अपने हाथ में करना है। बाबा भी आज यह नहीं कह सकता, जब कि उसको घर-त्याग किये हुए कल पूरे ५३ साल हुए हैं, कि अभी उसका शरीर उसे नीचे नहीं खींचता। शरीर तो तमोगुण में जायेगा, इन्द्रियाँ, मन इत्यादि रजोगुण में, बुद्धि सतोगुण में, आत्मा इन सबसे मुक्त है। हमारी यही प्रार्थना है कि आप-हम सब सतत सजग रहकर प्रयास करते रहें, ताकि आत्मा का प्रकाश बुद्धि, मन, इन्द्रियों और शरीर में प्रकट हो।" •

विनोबाजी का कार्यक्रम

१८ अप्रैल तक—गांधी संग्रहालय, पटना
पता : ग्रामदान-प्राप्ति समिति,
कदम कुआँ, पटना–३
१९ से २५ अप्रैल तक—आरा (शाहाबाद)
पता : बिहार खा० ग्रा० संघ, खादी भंडार,
आरा, जिला-शाहाबाद (बिहार)
२६ से २८ अप्रैल तक – संथाल परगना
पता : ग्रामोद्योग-समिति, देवघर
जिला-संथाल परगना (बिहार)
विनोबा-निवास, पटना
दिनांक : ३-४-'६९ —कृष्णराज मेहता

www.vinoba.in

प्रादेशिक पत्र

पंजाब-हरियाणा सर्वोदय-मंडल

(कार्य-विवरण : अप्रैल '६८ से मार्च '६९ तक)

लोक-शिक्षण अभियान, हरियाणा :—५ अप्रैल को चंडीगढ़ में हुई मंडल की विशेष बैठक में हरियाणा में मध्यावधि-चुनाव पर विचार किया गया और मंडल ने इस अवसर पर सर्व सेवा संघ की रीति-नीति के अनुसार हरियाणा भर में मतदाता-शिक्षण का अभियान चलाने का निश्चय किया। पूरे पंजाब तथा हरियाणा, दोनों राज्यों के गिने-चुने कार्यकर्ता, जिनमें गांधी-स्मारक निधि, खादी-संस्थाओं और सर्वोदय-मंडलों के लोग थे, एक द्विदिवसीय कार्यकर्ता-प्रशिक्षण शिविर रोहतक में किया गया। शिविर के बाद कार्यकर्ताओं की टोलियाँ एक-एक प्रमुख कार्यकर्ता के नायकत्व में राज्य के सभी सातों जिलों में रवाना हुईं और प्रत्येक टोली ने अपने जिले के केन्द्रीय स्थान पर शिविर स्थापित करके सघन रूप से लोक-शिक्षण का कार्य किया। कतिपय स्थानों पर साक्षा-मंच भी लगाकर प्रत्याशियों द्वारा एक ही स्थान से अपने विचार रखने का आयोजन हुआ।

पंजाब :—पंजाब में भी मध्यावधि चुनाव का मौका आया। मंडल ने हरियाणा की तरह पंजाब में भी लोक-शिक्षण अभियान चलाने का फैसला किया। रोहतक की ही तरह फिरोजपुर में दिसम्बर '६८ में सर्व सेवा संघ के क्षेत्रीय मंत्री श्री पूर्णचन्द्र जैन के मार्गदर्शन में कार्यकर्ता-प्रशिक्षण शिविर किया गया और पूरे प्रान्त में पूर्ववत मतदाता-शिक्षण का काम हुआ।

अ० भा० तरुण-शान्ति-सेना शिविर, पठानकोट :—दिनांक १५ जून से २६ जून तक अखिल भारतीय तरुण-शांति-सेना शिविर पठानकोट के श्री सनातन धर्म हायर सेकेण्डरी स्कूल में सम्पन्न हुआ। इसमें नागालैंड, नेफा से लेकर गुजरात तक और केरल से काश्मीर तक के लगभग १०० तरुण विद्यार्थियों ने भाग लिया। शिविर को सर्वश्री जयप्रकाश नारायण, मनमोहन चौधरी—अध्यक्ष सर्व सेवा संघ, राधाकृष्णजी—मंत्री सर्व सेवा संघ, आचार्य दादा धर्माधिकारी, हान्स डिवोर, देवेन्द्रकुमार गुप्त, गंगाशरण सिंह आदि नेताओं और प्रमुख सेवकों का मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। अखिल भारतीय शान्ति-सेना मंडल के मंत्री श्री नारायण देसाई तो आद्योपान्त पूरा समय शिविरार्थियों के साथ रहे। शिविरार्थी प्रायः प्रतिदिन टोलियों में श्रमदान-निमित्त प्रस्थान आश्रम में भी आते रहे और दो बार अमृतसर और हाईड्रोलिक स्टेशन मलकपुर तथा हैड वर्क्स माधोपुर की यात्रा भी हुई। शिविर के दौरान अ० भा० शान्ति-सेना मंडल की बैठक भी पठानकोट में हुई।

प्रस्थान आश्रम :—प्रस्थान आश्रम पूज्य विनोबाजी द्वारा संस्थापित ब्रह्मविद्या के पाँच आश्रमों में से देश की उत्तर-पश्चिमी सीमा का आश्रम है। पंजाब-हरियाणा सर्वोदय-मंडल का प्रधान कार्यालय भी आश्रम में ही है और यहीं से पूरे प्रान्त के सर्वोदय-आन्दोलन की गतिविधियों का संचालन होता है।

शान्ति-सेना समिति :—प्रान्त में शान्ति-सेना के कार्य के लिए मंडल द्वारा गठित शान्ति-सेना समिति है। समिति का कार्यालय पहले प्रस्थान आश्रम में था, परन्तु इस वर्ष सुविधा की दृष्टि से अधिक केन्द्रीय स्थान जालंधर में स्थानांतरित किया गया। कुलयम (पंजाब) तथा पट्टीकल्याणा (हरियाणा) में दो शान्ति-सैनिक शिविर लिये गये।

ग्रामदान समिति :—शांति-सेना की तरह ग्रामदान-प्राप्ति एवं पुष्टि-कार्य के लिए मंडल ने श्री ओंकारचन्दजी के संयोजकत्व में ग्रामदान-प्राप्ति तथा पुष्टि-समिति बनायी है। पूरे ग्रामदान-कार्य का मार्गदर्शन एवं संचालन प्रसिद्ध सर्वोदय-नेता डा० दयानिधि पटनायक करते हैं। मंडल ने इस वर्ष के आरम्भ में ही ५ अप्रैल '६८ को चंडीगढ़ में हुई बैठक में समिति द्वारा बनायी गयी ग्रामदान-कार्य की वार्षिक योजना को स्वीकार किया था, जिसके अनुसार प्रतिमास १५० कार्यकर्ताओं पर आधारित कम-से-कम दो प्रखण्ड या पूरी तहसील का एक-एक अभियान चलाने का विचार था और इसके साथ-साथ पुष्टि की शुरुआत के तौर पर ग्रामदानी गाँव में खादी-संकल्प, पुलिस-अदालत-मुक्ति, साहित्य-प्रचार और ग्रामसभाओं का संगठन आदि का विचार था; परन्तु विविध कारणों से योजना पर आंशिक तौर पर ही अमल हो सका।

क्रमशः मई, जून, अगस्त तथा अक्तूबर '६८ और मार्च '६९ में कोटकपुरा जिला भटिण्डा, कुसुमपट्टी, सुमा जिला शिमला, फरीदकोट तथा बड़लाड़ा जिला भटिण्डा तथा घरौंडा जिला करनाल में, इस प्रकार कुल ५ ग्रामदान-अभियान चलाये गये। इसमें सर्वोदय-मंडल, गांधी-स्मारक निधि तथा खादी-कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त गांधी आश्रम उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने भी योग दिया और कुल ३९६ ग्रामदान प्राप्त हुए।

घरौंडा के आँकड़े आना अभी बाकी हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर इस समय पूरे प्रान्त में पंजाब, हरियाणा और हिमांचल को मिलाकर प्राप्त ग्रामदानों की संख्या ३,६९३ हो जाती है, जिसका ब्यौरा जिलेवार इस प्रकार है :

जिला	ग्रामदान	प्रखण्डदान
पंजाब :		
फिरोजपुर	१९०	–
गुरुदासपुर	४२३	२
होशियारपुर	२६२	१
कपूरथला	५४	–
जालन्धर	१७४	१
लुधियाणा	१८	–
भटिण्डा	८३	–
प्रान्तवार योग :	१२०४	४
हरियाणा :		
अम्बाला	३४९	–
करनाल	५२४	१
जीन्द	२२	–

www.vinoba.in

जिला	ग्रामदान	प्रखंडदान
रोहतक	२१३	२
हिसार	१६३	—
प्रान्तवार योग :	१३०१	३
हिमाचल प्रदेश :		
कांगड़ा	८७३	—
महासू	३१५	—
प्रान्तवार योग :	११८८	—

इन अभियानों के अतिरिक्त बीच-बीच में हमारे कार्यकर्ताओं ने उत्तर प्रदेश तथा राजस्थान के ग्रामदान-अभियानों में भी जाकर भाग लिया। कार्यकर्ता-प्रशिक्षण की दृष्टि से फरवरी के प्रथम सप्ताह में पट्टीकल्याणा, पानीपत तथा आदमपुर में दो-दो दिनों के तीन कार्यकर्ता-शिविर भी किये गये।

दिसम्बर '६८ में फिरोजपुर में हुई पंजाब-हरियाणा सर्वोदय-मंडल की बैठक में ग्रामदान के कार्य पर पुनः गहराई से विचार हुआ और निर्णय हुआ कि मंडल की विभिन्न प्रवृत्तियों में ग्रामदान-कार्य को प्रमुखता दी जाय तथा पूज्य विनोबाजी ने पूरे पंजाब-हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेशदान का जो आह्वान किया है, उस दिशा में शताब्दी-वर्ष के दौरान हरियाणा-दान के संकल्प से शुरुआत की जाय। इसके लिए हरियाणा के सभी तबकों के प्रमुख व्यक्तियों का सम्मेलन बुलाकर औपचारिक संकल्प किया जाय।

अखिल भारत महिला लोकयात्रा : इस वर्ष हमारे लिए अत्यन्त सौभाग्य की बात है कि पूज्य विनोबाजी के आशीर्वाद से १२ वर्ष की अखण्ड पद-यात्रा पर निकली बहनें सुश्री हेम भराली, निर्मल वैद्य, लक्ष्मी फूँकन तथा देवी रीझवानी की अखिल भारत लोकयात्रा मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश की यात्रा के बाद २० अक्तूबर '६८ से होडल जिला गुड़गाँव के मुकाम से हरियाणा में दाखिल हुई। छः मास में पूरे हरियाणा के सभी जिलों क्रमशः गुड़गाँव, महेन्द्रगढ़, हिसार, जींद, रोहतक, करनाल की पदयात्रा करके अब अन्तिम जिला अम्बाला का कार्यक्रम चला। इन बहनों की इस सतत यात्रा ने पूरे हरियाणा में जन-जागृति तथा नव-चेतना का संचार किया है।

सर्वोदय पुस्तक भंडार हिसार, पठानकोट पट्टीकल्याणा तथा गांधी-स्मारक भवन चंडीगढ़ की ओर से खास तौर से साहित्य-प्रचार की दिशा में कार्य हुआ। इनके द्वारा क्रमशः १७,८०० रु०, ३,६०० रु०, और २०,००० रु० की बिक्री हुई। फुलिया भगतजी घर-घर घूमकर सतत साहित्य-बिक्री के लिए समय देते हैं। चालू वर्ष के दौरान उन्होंने ७५० रुपये की साहित्य-बिक्री की।

गांधी-जन्म-शताब्दी :— पंजाब तथा हरियाणा में पिछले वर्ष गांधी-जन्म-शताब्दी के सन्दर्भ में एक गैर-सरकारी समिति गठित की गयी। जुलाई के प्रारम्भ में चंडीगढ़ में एक त्रिदिवसीय कार्यकर्ता-प्रशिक्षण शिविर आयोजित किया गया, जिसे दादा धर्माधिकारीजी का मार्गदर्शन भी प्राप्त हुआ। अब हरियाणा तथा पंजाब, दोनों सरकारों ने अलग-अलग समितियाँ गठित की हैं। इसमें से हरियाणा की समिति काफी सक्रिय है। उन्होंने लोकयात्रा को भी काफी सहयोग दिया है।

संगठन :— जिला सर्वोदय-मंडलों की सक्रियता के लिए सतत प्रयत्न हुआ। पंजाब-हरियाणा के १६ जिलों में से अब तक ११ जिलों में नया जिला सर्वोदय-मंडल का गठन हुआ है।

—यशपाल मित्तल, मंत्री

स्वास्थ्योपयोगी प्राकृतिक चिकित्सा की पुस्तकें

		लेखक	मूल्य
कुदरती उपचार		महात्मा गांधी	०-८०
आरोग्य की कुंजी		,, ,,	०-४४
रामनाम		,, ,,	०-५०
स्वस्थ रहना हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है	द्वितीय संस्करण	धर्मचन्द सरावगी	२-००
सरल योगासन	,, ,,	,, ,,	२-५०
यह कलकत्ता है	,, ,,	,, ,,	२-००
तन्दुरुस्त रहने के उपाय	प्रथम संस्करण		१-२५
स्वस्थ रहना सीखें	,, ,,	,, ,,	२-००
घरेलू प्राकृतिक चिकित्सा	,, ,,	,, ,,	०-७५
पचास साल बाद	,, ,,	,, ,,	२-००
उपवास से जीवन-रक्षा		अनुवादक ,, ,,	३-००
रोग से रोग-निवारण		स्वामी शिवानन्द	२०-००
How to live 365 day a year		John	22-05
Everybody guide to Nature cure		Benjamin	24-30
Fasting can save your life		Shelton	7-00
उपवास		शरण प्रसाद	१-२५
प्राकृतिक चिकित्सा-विधि		,, ,,	२-५०
पाचनतंत्र के रोगों की चिकित्सा		,, ,,	२-००
आहार और पोषण		झवेरभाई पटेल	१-५०
वनौषधि-शतक		रामनाथ वैद्य	२-५०

इन पुस्तकों के अतिरिक्त देशी-विदेशी लेखकों की भी अनेक पुस्तकें उपलब्ध हैं।

विशेष जानकारी के लिए सूचीपत्र मंगाइए।

एक्मे, ८।१, एसप्लानेड ईस्ट, कलकत्ता—१

www.vinoba.in

बम्बई में शिवसेना का प्रभाव

हाल ही में एक गांधी-शताब्दी विचार-गोष्ठी के कार्यक्रम के निमित्त से मैं बम्बई गया था। वहाँ कई दिन रहने का अवसर मिला, जिसके कारण मैं उस हिंसा-काण्ड का भी अध्ययन कर सका, जिसकी वजह से गत फरवरी के दूसरे सप्ताह में बम्बई की नगरी को शिवसेना ने हिला दिया था। जैसा मेरे सर्वोदय-मित्रों ने बताया, इस उपद्रव का तात्कालिक कारण तो यह था कि ७ फरवरी को जब उपप्रधान मंत्री बम्बई गये थे, तो उन्होंने उस स्मरण-पत्र (मेमोरण्डम) को लेने से इन्कार कर दिया, जो एक विशाल जनसमूह उन्हें पेश करना चाहता था और जिसका नेतृत्व शिवसेना के अध्यक्ष श्री बाल ठाकरे स्वयं कर रहे थे। जब उपप्रधान मंत्री की गाड़ी के नीचे दो नौजवान घायल हो गये तो श्री ठाकरे ने ऐलान कर दिया, "अब सचमुच ही हमारा जंग शुरू हुआ है।" उसके बाद जो घटनाएँ हुईं वे बड़ी भयानक और दुःखद थीं! बम्बई में फरवरी ८ से ११ तक जो आगजनी, लूट-पाट और बरबादी की गयी वैसी पहले कभी नहीं हुई थी। रेलवे-स्टेशन, ट्रेनें, बसें, टैक्सियाँ, सरकारी दफ्तर और दूध-केन्द्र आदि जला दिये गये। विध्वंस का खास निशाना दक्षिण भारतीयों, विशेषकर कन्नड़ भाषा-भाषियों के होटल और दूकानें थीं। लेकिन गुजराती, ईरानी, सिन्धी और कुछ मराठी दुकानदारों का भी नुकसान हुआ। उन चार दिनों में बम्बई में अभूतपूर्व आतंक छा गया था। जब यह सब हो रहा था तो पुलिस प्रायः नजर नहीं आती थी, या दिखाई भी पड़ी तो कोई कारवाई करने के लिए सजग नहीं मालूम पड़ती थी। बम्बई के हमारे सर्वोदय-मित्रों ने बताया कि केवल रेलवे का ही दो करोड़ रुपये से ज्यादा का नुकसान हो गया। गोली-काण्ड में ५८ लोग मारे गये और ५०० से ज्यादा घायल हुए।

बम्बई के इस उपद्रव का सबसे दुःखद पहलू जानमाल की बरबादी उतनी नहीं थी, जितनी कि वह लाचारी, जिसके शिकार सभी हो गये थे—चाहे आम जनता हो, चाहे प्रतिष्ठित नागरिक हों, या चाहे राजनैतिक नेता हों। सब बेबस हो गये थे। आश्चर्य की बात यह है कि कम्युनिस्टों के अतिरिक्त जिनको वह अपना 'कट्टर दुश्मन' कहती है, शिवसेना को, प्रत्यक्ष नहीं तो परोक्ष में अवश्य ही, विभिन्न राजनैतिक पक्षों की—कांग्रेस, संसोपा, प्रसोपा और जनसंघ की—सद्भावना प्राप्त है। सच तो यह है कि पिछले दस सालों में शिवसेना ने इन पक्षों के नेताओं के साथ काफी एहसान किये हैं और यही कारण है कि शिवसेना के खिलाफ कोई आवाज नहीं उठा सकता। बातचीत के दौरान में शिवसेना के स्वयंसेवक स्पष्ट कहते हैं कि केन्द्रीय गृहमंत्री श्री यशवंतराव चह्वाण के आशीर्वाद भी उन्हें प्राप्त हैं। श्री चह्वाण का वे बहुत आदर करते हैं और उन्हें महाराष्ट्र का बेताज का बादशाह मानते हैं। यह बात बहुत महत्त्वपूर्ण है कि श्री चह्वाण ने बम्बई में शिवसेना के विरुद्ध कुछ नहीं कहा और न उसे कोई चेतावनी ही दी है। साथ ही महाराष्ट्र-सरकार ने जनता की इस माँग को मंजूर नहीं किया है कि फरवरी की घटनाओं की न्यायायिक जाँच (जुडिशियल इन्क्वायरी) की जाय।

प्रश्न उठता है कि यह सब क्यों हुआ? इसके अनेक कारण हो सकते हैं, जिनमें दो प्रमुख हैं—लोगों की भयानक आर्थिक दुर्दशा और उनकी यह मान्यता कि बिना हिंसा के सरकार के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती। शिवसेना के लगभग सभी स्वयंसेवक सुन्दर, स्वस्थ और प्राणवान नवयुवक हैं, लेकिन उनके पास रोजी कमाने का कोई साधन नहीं है। बेकारी से वे परेशान हैं। हमें बताया जाता है कि देश ने करवट ले ली है और चौथी योजना शीघ्र शुरू होगी। बड़े दुःख के साथ कहना पड़ेगा कि दिल्ली में रहनेवाले हमारी योजना के कर्णधारों को देश की वस्तु-स्थिति का ज्ञान नहीं है और वे मानो अपने स्वप्नलोक में विचर रहे हैं। अगर बम्बई के उपद्रवों से वे यह नहीं सीखते कि देश के हर बालिग नवजवान को काम मिलना चाहिए तो मुझे डर है कि बम्बई में और जगह-जगह पर कहीं ज्यादा विनाशकारी हिंसक काण्ड होंगे। इसके अलावा राजनैतिक पक्षों को भी यह समझ लेना चाहिए कि निहित स्वार्थों या संकीर्ण और प्रतिक्रियाशील समुदायों के साथ मौकापरस्ती और साँठ-गाँठ करने से उन्हें कोई लाभ न होगा और वे उसी तरह निष्प्राण और प्रभावहीन हो जायँगे, जैसे बम्बई-काण्ड के समय हो गये थे। साथ ही सरकार को भी इतनी सुबुद्धि आनी चाहिए कि हिंसा भड़कने के पहले ही समस्या का समाधान कर दे, क्योंकि हिंसा से समस्या उलझ जाती है और जनता का विश्वास भी सरकार खो बैठती है। —सुरेशराम भाई

१२½ प्रतिशत की भारी छूट "भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक के पाठकों को

दिनांक ३०-४-'६६ तक नीचे छपा हुआ 'कूपन' काटकर भेजने पर स्वयं चिकित्सा, स्वास्थ्य और सदाचार-सम्बन्धी सर्वोत्तम मासिक पत्र "स्वस्थ जीवन"

८ रु० के बजाय केवल ७ रु० वार्षिक मूल्य में ही मिलेगा।

[नापसन्द होने पर पूरा मूल्य लौटा दिया जायेगा।]

'कूपन' यहाँ से काटिए

श्री व्यवस्थापक, "स्वस्थ जीवन" गांधी-स्मारक निधि, राजघाट, नयी दिल्ली—१

मैं "भूदान-यज्ञ" साप्ताहिक में से यह 'कूपन' काटकर भेज रहा हूँ और मैंने आज मनिआर्डर/पोस्टल आर्डर नं०……द्वारा ७ रु० आपके पास भेजा है, इसलिए मुझे १२½ प्रतिशत की छूट देकर अपनी घोषणानुसार ८ रु० के बजाय केवल ७ रु० में ही "स्वस्थ जीवन" का वार्षिक ग्राहक बनाइए।

हस्ताक्षर…… पूरा नाम और पता……

कोटद्वार में शराबबन्दी आन्दोलन

www.vinoba.in

श्री मानसिंह रावत का उपवास समाप्त

कोटद्वार। यहाँ पर १ मार्च से शराब की दूकान पर चलनेवाले शान्तिमय धरना-आन्दोलन ने २७ मार्च से जिला गांधी-जन्म-शताब्दी समिति के मंत्री और गढवाल के सर्वोदय-सेवक श्री मानसिंह रावत के उपवास के फलस्वरूप नया मोड़ लिया है। ३० मार्च को नगर में हजारों स्त्री-पुरुषों के विशाल जुलूस निकले और शराबबन्दी के समर्थन में सभाएँ हुई।

कोटद्वार के अलावा लैंसडौन और सतपुली की देशी शराब की दूकानों पर भी धरना चल रहा है। शराब की बिक्री पूर्णतः बन्द हो गयी है। कोटद्वार के शराब-विक्रेताओं ने ३१ मार्च को ठेके की मियाद के अन्तिम दिन स्वेच्छा से दूकान बन्द कर दी। मजदूरों और मोटर-चालकों ने प्रदर्शन कर घोषणा की है कि वे शराब नहीं पियेंगे और यदि दूकानें बन्द न हुई तो सारे गढ-वाल में मोटर-यातायात बन्द कर देंगे।

३१ मार्च को नगर के प्रमुख नागरिकों और नेताओं की एक सभा धरना-स्थल के निकट हुई, जिसमें तुरन्त शराब की दुकान को बन्द करने की माँग को लेकर जिले के विधायकों एवं वयोवृद्ध नेता श्री मुकुन्दलाल बैरिस्टर तथा नगराध्यक्ष श्री किशनलाल अग्र-वाल का शिष्टमण्डल मुख्यमंत्री श्री चन्द्रभान गुप्त से मिलने भेजने का निश्चय हुआ है। श्री रावतजी से अनशन छोड़ने का निवेदन किया गया। नगरपालिका के एक सदस्य श्री रूपचन्द्र वर्मा ने नगरपालिका से त्यागपत्र दे दिया है। और अन्य सदस्य भी शराब बन्द न होने पर विरोध में सामूहिक त्यागपत्र देनेवाले हैं।

प्रमुख नेताओं के द्वारा दिये गये इस आश्वासन पर कि किसी भी हालत में शराब नहीं बिकने दी जायेगी, श्री रावत ने अपना आमरण अनशन ४ अप्रैल को समाप्त किया।

—योगेशचन्द्र बहुगुणा

✻ गांधी-शताब्दी कैसे मनायें ? ✻

★ आर्थिक व राजनैतिक सत्ता के विकेन्द्रीकरण और ग्राम-स्वराज्य की स्थापना के लिए ग्रामदान-आन्दोलन में योग दें।

★ देश को स्वावलम्बी बनाने और सबको रोजगार देने के लिए खादी, ग्राम और कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन दें।

★ सभी सम्प्रदायों, वर्गों, भाषावार समूहों में सौहार्द-स्थापना तथा राष्ट्रीय एकता व सुदृढ़ता के लिए शांति-सेना को सशक्त करें।

★ शिविर, विचार-गोष्ठी, पदयात्रा वगैरह में भाग लेकर गांधीजी के संदेश का चिंतन-मनन और प्रसार करें, उसे जीवन में उतारें।

गांधी रचनात्मक कार्यक्रम उपसमिति (राष्ट्रीय गांधी-जन्म-शताब्दी-समिति), दुंकलिया भवन, कुन्दीगरों का भैरू, जयपुर-३ राजस्थान द्वारा प्रसारित।

www.vinoba.in

सामयिक चर्चा

भारत-पाक एकता

"लोहिया ने सन् १९६६ में कहा था कि भारत-पाक एकता के मार्ग में तीन बाधाएँ हैं :—(क) पाकिस्तान का शासक-वर्ग, जिसका स्वार्थ बँटवारा कायम रखने में जुड़ा हुआ है। (ख) कांग्रेस पार्टी, जो एकता के परिणामों से डरती है कि उसका प्रभुत्व खत्म हो जायेगा। (ग) हिन्दुओं और मुसलमानों के दिमाग अभी काफी हिले नहीं हैं।

इनमें से दो बाधाएँ टूटने की प्रतीक्षा में हैं। भारत में कांग्रेस का एक-छत्र शासन नहीं रह गया। वह दिनोंदिन कमजोर पड़ता जा रहा है। पाकिस्तान में जन-विद्रोह के आगे शासक-वर्ग को झुकना पड़ रहा है। लेकिन तीसरा काम—हिन्दुओं और मुसलमानों के दिमाग को हिलाने का—कहाँ तक हो रहा है?

लोहिया ने कहा था : भारत में हिन्दू और मुसलमान एक-दूसरे के जितने नजदीक आयेंगे, पाकिस्तान की आखिरी घड़ी भी उतनी ही नजदीक आयेगी।"

—"दिनमान", २३ मार्च, '६९

समाजवाद क्या है ?

"इस समय समाजवाद समाज के अनेक रूपों में से एक है। इसके गुण और दोष, दोनों पूँजीवाद से भिन्न हैं। प्रश्न है कि समाजवाद को कैसा होना चाहिए। समाजवाद को बाहरी स्वतंत्रता में ठोस तत्त्व भरना चाहिए। आज आपके देश में चुनाव की, सभा करने की, विचार प्रकट करने की स्वतंत्रता है। ये औपचारिक, मध्यमवर्गीय स्वतंत्रताएँ हैं। लेकिन अगर समाजवाद के नाम में इन स्वतंत्रताओं को छीनना पड़ता है, तो मानना पड़ता है कि समाजवादी समाज में सचमुच कोई बड़ा दोष है। एक बार मैंने एक चीनी से पूछा कि क्या तुम अपने को स्वतंत्र महसूस करते हो तो उसने कहा : "हाँ"। मैंने पूछा कि कैसे, तो उसने उत्तर दिया कि अब वह टेनिस का रैकेट खरीद सकता है, और टेनिस खेल सकता है। यह एक बहुत अच्छा ठोस उत्तर है। अगर दोनों स्वतंत्रताएँ एकसाथ सिद्ध हो जायँ—वास्तविक तरीके पर, केवल दिखाने के लिए नहीं—तो एक ऐसे मनुष्य का जन्म होगा जैसा पहले कभी हुआ नहीं था। वह जब टेनिस खेलना चाहेगा तो खेल सकेगा, और जब अपने विचार प्रकट करना चाहेगा तो खुलकर प्रकट कर सकेगा। वह अपने प्रति वफादार रहकर सचमुच जैसा है वैसा रहेगा, और जैसा बनना चाहता है, बनेगा। वह एक प्रौढ़ व्यक्ति के रूप में सामने आयेगा। लेकिन जबतक समाजवाद ऐसे समाज में है, जिसमें किसी "बड़े व्यक्ति" (डिक्टेटर या अन्य कोई) को हरदम बताना पड़ता है कि यह करो, वह मत करो, तबतक यह अनिवार्य है कि समाजवाद अपने आप खत्म हो जाय। हम जो चाहते हैं, और हमें जिसकी जरूरत है, वह एक प्रौढ़, विकसित व्यक्ति की है—पूर्ण प्रौढ़ और पूर्ण मुक्त, प्रकृति को अपने वश में रखनेवाला। समाजवाद यही है।"

(दो चेक पत्रकारों को सार्त्र का उत्तर)

"टाइम्स आफ इंडिया", २३ मार्च, '६९

केन्द्र और राज्य

"भारत का संविधान बनानेवालों ने केन्द्रीय सरकार को राज्य-सरकारों का महाजन, और टैक्स वसूल करनेवाली एजेंसी क्यों बनाया? इसलिए कि पूरे देश से कर वसूल हो, और वित्त-आयोग के निर्णय के आधार पर हर राज्य को आवश्यकता के अनुसार विकास के लिए धन मिल सके। अगर ऐसा न होता तो गरीब राज्य अपनी जरूरत के लिए धन कभी इकट्ठा ही न कर पाते। संविधान बनाते समय बम्बई और प० बंगाल ने 'संग्रह' के आधार पर आय-कर के हिस्से की माँग की थी, जिसका अर्थ यह होता कि बंबई ३३ फीसदी और प० बंगाल २८.६ फीसदी, यानी दोनों मिलकर ६२ फीसदी आय-कर ले लेते, जब कि उनकी जनसंख्या देश की कुल जनसंख्या का केवल १७ फीसदी है।

"आज राज्यों के लिए अधिक अधिकारों की माँग है, जिसे कांग्रेसी और गैर-कांग्रेसी राजनैतिक नेता दोनों कर रहे हैं। सस्ती लोकप्रियता का यह आसान तरीका बन गया है। यह सही है कि देश एक-दलीय शासन से निकलकर बहु-दलीय शासन के युग में प्रवेश कर रहा है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं होना चाहिए कि केन्द्र कमजोर किया जाय, या दूसरी ओर केन्द्र का एकात्मक शासन कायम किया जाय। संविधान ने जो ढाँचा कायम किया है उसमें 'सहकारी संघवाद' (कोआपरेटिव फेडरलिज्म) की कल्पना है। उसीमें आज के प्रश्नों का उत्तर है।"

—"हिन्दू", २२ मार्च, '६९

गांधी का उत्तर

"इस विचित्र जीव मनुष्य के लिए, जो पशुता और आध्यात्मिकता के बीच कहीं खड़ा है कौनसी सामाजिक, राजनैतिक और आर्थिक व्यवस्था सबसे अच्छी होगी? इस प्रश्न का गांधी ने एक सरल और बुद्धिमत्तापूर्ण उत्तर दिया। उसने कहा, मनुष्यों को समुदायों में रहना और काम करना चाहिए—ऐसे छोटे समुदाय जिनमें वास्तविक स्वराज्य सम्भव हो तथा जिसमें हर व्यक्ति जिम्मेदारी ले सके। और, ये समुदाय बड़ी इकाइयों से इस तरह जुड़े हुए हों कि सत्ता के दुरुपयोग की गुञ्जाइश न रहे। संगठन की दृष्टि से लोकतंत्र की व्यवस्था जितनी ही बड़ी और बोझिल होती जाती है, जनता का राज्य उतना ही नकली होता जाता है; और व्यक्ति की आवाज कमजोर होती जाती है, और स्थानीय समूहों की अपने जीवन के बारे में निर्णय करने की शक्ति क्षीण होती जाती है। इसके अलावा स्नेह वैयक्तिक सम्बन्धों में ही सम्भव होता है। इसलिए छोटे समुदायों में ही हृदय की उदारता प्रकट हो सकती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि छोटे समुदाय में अपने आप उदारता का प्रकट होना अनिवार्य है। लेकिन बड़े बिखरे समूह में तो उदारता की संभावना भी नहीं रह जाती, क्योंकि बड़े समुदाय के सदस्यों का एक-दूसरे से कोई वैयक्तिक सम्बन्ध नहीं रह जाता।"

—अल्डू हक्सले, '६३

भूदान-यज्ञ १४-४-'६९ रजिस्टर्ड नम्बर एल. ३५७ [पहले से डाक-व्यय दिये बिना भेजने की स्वीकृति प्राप्त] लाइसेन्स नम्बर पी ३४
www.vinoba.in

बिहारदान के आखिरी अभियान में सभी संस्थाओं से दस प्रतिशत कार्यकर्ता-शक्ति लगाने की अपील

आगामी ७ मई से २१ मई तक के महा अभियान को सफल बनाने के लिए पूर्वतैयारी प्रारम्भ

पटना : ७ अप्रैल । बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति के मंत्री और प्रदेश के वरिष्ठ सर्वोदय-नेता श्री वैद्यनाथ प्रसाद चौधरी ने हमारे संवाददाता को बताया कि अब बिहारदान के शेष काम को पूरा करने के लिए पूर्व-तैयारी शुरू हो गयी है। प्रदेश के प्रमुख कार्यकर्ताओं के दौरे इस निमित्त से हो रहे हैं और श्री जयप्रकाश नारायण भी रांची, जमशेदपुर, आरा आदि स्थानों का दौरा करने जा रहे हैं। विनोबाजी का भी पटना के बाद आरा, संथाल परगना, धनबाद, हजारीबाग, रांची का कार्यक्रम बन चुका है। ७ मई के पहले ही बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति का दफ्तर रांची चला जायगा। इस सम्बन्ध में स्मरणीय है कि रांची, हजारीबाग, सिंहभूमि जिले ही बिहारदान के अभियान की सबसे दुर्गम चढ़ाई साबित हो रहे हैं।

श्री वैद्यनाथ बाबू ने बताया कि इस अभियान में प्रदेश की सभी छोटी-बड़ी संस्थाओं से अपनी १०% कार्यकर्ता-शक्ति लगाने की अपील की जा रही है। बिहार-दान के संकल्प के समय सभी संस्थाओं के प्रतिनिधियों ने इस प्रकार का निश्चय किया था, उसके लिए यह महत्त्वपूर्ण अवसर है।•

संकल्प-सिद्धि के लिए अधिक तपस्या

हाल ही में बिहार ग्रामदान-प्राप्ति समिति की पटना में आयोजित बैठक में विनोबाजी ने बिहारदान के संकल्प को एक निश्चित अवधि में पूरा कर लेने की अपील करते हुए अपने मार्मिक प्रवचन में कहा, "कर्मयोग की एक मुद्दत मानी है, मुद्दत के अंदर अगर संकल्प-सिद्धि नहीं हुई तो अधिक तपस्या की जरूरत पड़ सकती है। बाबा ने उसकी तैयारी कर ली है।"

उत्तर प्रदेश में ग्रामदान की स्थिति (३१ मार्च '६९ तक)

जिला	ग्रामदान	प्रखंडदान
बलिया*	१,४६६	१८
उत्तरकाशी*	५६६	४
वाराणसी	२०,५९	२०
आजमगढ़	१,५४४	१०
आगरा	९७९	८
फर्रुखाबाद	८३५	—
मैनपुरी	७६०	५
गाजीपुर	६०२	५
चमोली	५६९	५
सहारनपुर	४९६	—
एटा	४८१	—
मिरजापुर	४७८	३
मथुरा	४६९	—
कानपुर	४४३	—
फैजाबाद	४०६	४
हरदोई	३०६	—
मुरादाबाद	२९६	—
अलीगढ़	२९०	—
गोरखपुर	२८९	—
देहरादून	२५५	२
मेरठ	२४५	—
मुजफ्फरनगर	१०७	—
देवरिया	१८४	—
बुलन्दशहर	१५७	—
झांसी	१३७	—
जौनपुर	१०८	१
इटावा	१०५	—
बस्ती	१०५	—
पिथौरागढ़	९४	१
अलमोड़ा	८४	—
टेहरी	६९	—
गढ़वाल	६१	—
इलाहाबाद	४०	—
उन्नाव	५	—
हमीरपुर	१	—
गोंडा	१	—
शाहजहांपुर	१	—
फतेहपुर	१	—
रायबरेली	१	—
कुल :	१५,१९४	८६

* जिलादान हो चुका है।

—कपिलभाई, संयोजक

लोकभारती, शिवदासपुरा में गांधी-दर्शन के प्रशिक्षण का आयोजन

गांधी-जन्म-शताब्दी वर्ष में राज्य के युवक भाई-बहनों व रचनात्मक कार्य में लगे कार्यकर्ताओं को गांधी-विचार एवं समकालीन विचारधाराओं का तुलनात्मक अध्ययन कराने की दृष्टि से शिवदासपुरा स्थित लोकभारती में प्रशिक्षण की व्यवस्था की गयी है। तदनुसार १ मई '६९ से एक-एक महीने के शिविर प्रारम्भ हो जायेंगे। एक महीने की अवधि में गांधी-विचार आन्दोलन एवं कार्यक्रम, सत्याग्रह-विज्ञान, ट्रस्टीशिप, ग्रामदान-आन्दोलन, गांधी-जीवन व देश-विदेश में शान्ति-आन्दोलन इत्यादि पाठ्य-विषय होंगे। स्वाध्याय के लिए गांधी-साहित्य से सम्पन्न पुस्तकालय की व्यवस्था रहेगी तथा १ महीने तक गांधी-विचार के अनुसार आश्रम-पद्धति के अनुरूप जीवन जीने का अवसर सुलभ रहेगा। जो भी भाई-बहन गांधी-विचार का अध्ययन करना चाहते हैं, उन्हें आचार्य, लोकभारती, शिवदासपुरा (जयपुर) से पत्र-व्यवहार करना चाहिए। एक महीने के लिए जो भी भाई-बहन शिक्षण के लिए आयेंगे, उन्हें भोजन व आवासीय व्यवस्था के लिए ७० रुपया जमा करना होगा।

—लोकभारती, शिवदासपुरा द्वारा प्रसारित

वार्षिक शुल्क : १० रु०; विदेश में २० रु०; या २५ शिलिंग या ३ डालर। एक प्रति : २० पैसे।
श्रीकृष्णदत्त भट्ट द्वारा सर्व सेवा संघ के लिए प्रकाशित एवं इण्डियन प्रेस (प्रा०) लि० वाराणसी में मुद्रित।